जम्बू द्वीप

जम्बू द्वीप

सुमेरु पर्वत

प्रकाशक - दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान

आर्यिका ज्ञानमती

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का तेरहवाँ पुष्प

जंबूद्वीप ज्ञानज्योति प्रवर्तन के पावन अवसर पर प्रकाशित

जम्बूद्वीप

लेखिका :
आर्यिकारत्न श्रीज्ञानमती माताजी

प्रकाशक
दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान,
हस्तिनापुर (मेरठ) उ०प्र०

तृतीय संस्करण }
२२०० प्रति }

वीर नि० सं० २५१०
मार्च, १९८४

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करनेवाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं बृहद् ग्रन्थों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

ग्रन्थमाला सम्पादक

मोतीचंद जैन सर्राफ
शास्त्री, न्यायतीर्थ

रवीन्द्रकुमार जैन
बी० ए०, शास्त्री

■

मुद्रक :
वर्द्धमान मुद्रणालय जवाहर नगर, वाराणसी

विषयदर्पण

सम्पादकीय

यह जंबूद्वीप नामक पुस्तक भगवान् महावीर स्वामी के निर्वाण महोत्सव के समय सन् १९७४ में प्रकाशित हुई थी। इसकी अत्यधिक माँग होने से द्वितीय संस्करण का प्रकाशन सन् १९८१ में हुआ था अब आज यह तृतीय संस्करण का प्रकाशन हो रहा है। यह पुस्तक बड़े-बड़े ग्रन्थों के आधार से तैयार की गयी है। इसको पढ़कर हम जंबूद्वीप के विषय को संक्षेप से भली प्रकार समझ सकते हैं तथा यह जान सकते हैं कि भूगोल के संबंध में जैनाचार्यों की क्या मान्यता रही है। यह पुस्तक समस्त विद्वानों के लिए भी इस विषय की मार्गदर्शक के रूप में है। क्योंकि संक्षिप्त होते हुए भी इसमें समझने के लिए सारा विषय गर्भित है। भूगोल का विषय अत्यन्त सूक्ष्म है। सभी पदार्थ आज दृष्टिगोचर नहीं हैं। फिर भी उनका अस्तित्व सम्यग्दृष्टि को स्वीकार करना ही पड़ेगा। हम इस दिशा में प्रयत्नशील हैं कि हमारे जैन आगम के परिप्रेक्ष्य को लक्ष्य में रखकर कहाँ तक भूमंडल की शोध की जा सकती है। आशा है निकट भविष्य में कुछ न कुछ नये आयाम अवश्य ही खोज से सामने आयेंगे।

इस प्रयास के लिए समय-समय पर संस्थान द्वारा सेमिनारों का आयोजन भी किया गया है। तथा शोध के साथ ही प्रचार के लिए जम्बूद्वीप ज्ञान ज्योति का भ्रमण समग्र भारत में चल रहा है जिसका प्रवर्तन प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के करकमलों द्वारा ४ जून, १९८२ को लाल किला मैदान दिल्ली से हुआ था।

हस्तिनापुर
१५-२-८३

रवीन्द्रकुमार जैन

प्राक्कथन

यह तीन लोक अनादि निधन-अकृत्रिम है। इसको बनाने वाला कोई भी ईश्वर आदि नहीं है। इसके मध्यभाग में कुछ कम तेरह राजु लंबी, एक राजु चौड़ी और मोटी त्रसनाली है। इसमें सात राजु अधोलोक है एवं सात राजु ऊँचा ऊर्ध्वलोक है। तथा मध्य में निन्यानवे हजार चालीस योजन ऊँचा और एक राजु चौड़ा मध्यलोक है अर्थात् सुमेरु पर्वत एक लाख चालीस योजन ऊंचा है। इसकी नींव एक हजार योजन है जो कि चित्रापृथ्वी के अन्दर है। चित्रा पृथ्वी के ऊपर के समभाग से लेकर सुमेरु पर्वत की ऊंचाई निन्यानवें हजार चालीस योजन है। वही इस मध्यलोक की ऊंचाई है। यह मध्यलोक थाली के समान चिपटा है। और एक राजु तक विस्तृत है।

इसके ठीक बीचों-बीच में एक लाख योजन विस्तृत गोलाकार जम्बूद्वीप है। इस जम्बूद्वीप के ठीक बीच में सुमेरु पर्वत है। इस जंबूद्वीप में दूने-प्रमाण विस्तार वाला अर्थात् दो लाख योजन विस्तृत चारों तरफ से जंबूद्वीप को वेष्टित करने वाला लवणसमुद्र है। आगे इस समुद्र को वेष्टित करके चार लाख योजन विस्तार वाला धातकी खंडद्वीप है। उसको चारों ओर से वेष्टित करके आठ लाख योजन विस्तार वाला कालोदधि समुद्र है। उसको चारों तरफ से वेष्टित करके सोलह लाख योजन विस्तृत पुष्कर द्वीप है। ऐसे ही एक दूसरे को वेष्टित करते हुए असंख्यातों द्वीप और समुद्र हैं।

अन्त के द्वीप का नाम स्वयंभूरमण द्वीप है और अन्त के समुद्र का नाम स्वयंभूरमण समुद्र है।

पुष्कर द्वीप के बीचों-बीच में एक मानुषोत्तर पर्वत स्थित है जो कि चूड़ी के समान है। इसके निमित्त से इस पुष्कर द्वीप के दो भाग हैं। इसमें पूर्व अर्धपुष्कर में धातकीखंड के सदृश मेरु, कुलाचल, भरतक्षेत्र, गंगा, सिन्धु नदियाँ आदि की व्यवस्था है। यहीं तक मनुष्यों की उत्पत्ति है। मानुषोत्तर पर्वत के आगे केवल तिर्यंच और व्यन्तर आदि देवों के ही आवास हैं। अतः एक जम्बूद्वीप दूसरा धातकी खंड तीसरा आधा पुष्कर द्वीप ऐसे मिलकर ढ़ाई द्वीप होते हैं। इन ढ़ाई द्वीपों में ही मनुष्यों को

उत्पत्ति होती है और इनमें स्थित कर्मभूमि के मनुष्य ही कर्मों का नाश-कर मुक्ति को प्राप्त कर सकते हैं। अन्यत्र नहीं।

इस प्रकार से तीनों लोकों का ध्यान करना चाहिये। धर्मध्यान के चार भेदों में अन्तिम संस्थान विचय नाम का धर्मध्यान है जिसके अन्त-र्गत तीन लोक के ध्यान करने का वर्णन है। इसी प्रकार विरक्त होते ही तीर्थंकर जैसे महापुरुष भी जिनका चिंतवन करते हैं ऐसी द्वादशानुप्रेक्षा में भी लोकानुप्रेक्षा के वर्णन में तीन लोक के स्वरूप के चिंतवन का आदेश है।

तीनलोक के वर्णन को समझने के लिए त्रिलोकभास्कर पुस्तक को देखना चाहिये। और अधिक विस्तृत विवेचन के जिज्ञासुओं को तिलोयपण्णत्ति, त्रिलोकसार आदि ग्रंथों का स्वाध्याय करना चाहिये।

प्रस्तुत पुस्तक में केवल मात्र संक्षेप से जम्बूद्वीप का वर्णन है जो कि बहुत ही सरल और स्पष्ट है। इसमें सात क्षेत्र और सुमेरु पर्वत आदि का बहुत ही रोचक वर्णन है। आजकल बहुत से लोग प्रश्न किया करते हैं कि जम्बूद्वीप ऊपर स्वर्ग में है या पृथ्वी पर ? हमसे कितनी दूर है ? कोई पूछ वैठते हैं कि विदेह क्षेत्र इस पृथ्वी के नीचे है या ऊपर ? इन सभी का स्पष्टीकरण इस छोटी सी पुस्तक में किया गया है।

कुछ लोग योजन के प्रमाण के बारे में शंकायें उठाते रहते हैं। योजन का प्रमाण शास्त्रीय आधार से क्या है ? इसका स्पष्टीकरण नीचे दिया जा रहा है।

पुद्गल के सबसे छोटे टुकड़े को अणु-परमाणु कहते हैं।

ऐसे अनंतानंतपरमाणुओं का	१ अवसन्नासन्न।
८ अवसन्नासन्न का	१ सन्नासन्न
८ सन्नासन्न का	१ त्रुटिरेणु
८ त्रुटिरेणु का	१ त्रसरेणु
८ त्रसरेणु का	१ रथरेणु
८ रथरेणु का—उत्तम भोगभूमियों के बाल का	१ अग्रभाग
उत्तमभोगभूमियों के बाल के ८ अग्रभागों का	मध्यम भोगभूमियों के बाल का १ अग्रभाग
मध्यमभोगभूमि के बाल के ८ अग्रभागों का	जघन्य भोगभूमियों के बाल का १ अग्रभाग

जघन्य भोगभूमियों के बाल के ८ अग्रभागों का	कर्मभूमियों के बाल का १ अग्रभाग

कर्मभूमियों के बाल के ८ अग्रभागों की—१ लीख।

८ लीख का	१ जूं
८ जूं का	१ जव
८ जव का	१ अंगुल

इसे ही उत्सेधांगुल कहते हैं, इससे ५०० गुणा प्रमाणांगुल होता है।
६ उत्सेधांगुल का—१ पाद।

२ पाद का	१ वालिस्त
२ वालिस्त का	१ हाथ
२ हाथ का	१ रिक्कू
२ रिक्कू का	१ धनुष
२००० धनुष का	१ कोस
४ कोस का	१ लघुयोजन
५०० योजन का	१ महायोजन

नोट—२००० धनुष का १ कोस है। अतः १ धनुष में ४ हाथ होने से ८००० हाथ का १ कोस हुआ एवं १ कोस में २ मील मानने से ४००० हाथ का एक मील होता है।

एक महायोजन में २००० कोस होते हैं।

अंगुल के तीन भेद हैं—उत्सेधांगुल, प्रमाणांगुल और आत्मांगुल।

बालाग्र, लिक्षा, जूं और जौ से निर्मित जो अंगुल होता है वह 'उत्सेधांगुल' है।

पाँच सौ उत्सेधांगुल प्रमाण एक 'प्रमाणांगुल' होता है। जिस-जिस काल में भरत और ऐरावत क्षेत्र में जो मनुष्य हुआ करते हैं उस-उस काल में उन्हीं-उन्हीं मनुष्यों के अंगुल का नाम 'आत्मांगुल' है।

उपर्युक्त उत्सेधांगुल से ही उत्सेध कोस एवं चार उत्सेधकोस से एक योजन बनता है। यह लघुयोजन है।

उत्सेधांगुल से—देव, मनुष्य, तिर्यंच एवं नारकियों के शरीर की ऊँचाई का प्रमाण और चारों प्रकार के देवों के निवास स्थान व नगर आदि का प्रमाण होता है।

प्रमाणांगुल और प्रमाण योजन से—द्वीप, समुद्र, कुलाचल, वेदी, नदी, कुण्ड, सरोवर, जगती और भरतक्षेत्र आदि इन सबका प्रमाण जाना जाता है।

आत्मांगुलसे—झारी, कलश, दर्पण, वेणु, भेरी, युग, शय्या, शकट,

हल, मूसल, शक्ति, तोमर, वाण, नालि, अक्ष, चामर, दुंदुभि, पीठ, छत्र, मनुष्यों के निवास नगर और उद्यान आदि का प्रमाण जाना जाता है।

एक महायोजन में २००० कोस होते हैं। एक कोस में २ मील मानने से १ महायोजन में ४००० मील हो जाते हैं। अतः ४००० मील के हाथ बनाने के लिये १ मील सम्बन्धी ४००० हाथ से गुणा करने पर ४००० ×४००० = १६०००००० अर्थात् एक महायोजन में १ करोड़ ६० लाख हाथ हुए।

वर्तमान में रैखिक माप में १७६० गज का एक मील मानते हैं। यदि एक गज में २ हाथ मानें तो १७६० × २ = ३५२० हाथ का एक मील हुआ। पुनः उपर्युक्त एक महायोजन के हाथ १६०००००० में ३५२० हाथ का भाग देने से १६०००००० ÷ ३५२० = ४५४५ $\frac{5}{11}$ मील हुए।

परन्तु इस पुस्तक में स्थूल रूप से व्यवहार में १ कोस में २ मील की प्रसिद्धि के अनुसार सुविधा के लिये सर्वत्र महायोजन के २००० कोस को २ मील से गुणा कर एक महायोजन के ४००० मील मानकर उसी से ही गुणा किया गया है।

आजकल कुछ लोग ऐसा कह दिया करते हैं कि पता नहीं आचार्यों के समय कोस का प्रमाण क्या था ? और योजन का प्रमाण भी क्या था ?

किन्तु जब परमाणु से लेकर अवसन्नासन्न आदि परिभाषाओं से आगे बढ़ते हुए जघन्य भोगभूमि के बाल के ८ अग्रभागों का एक कर्मभूमि का बालाग्र होता है। तब इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि भोगभूमियों के बाल की अपेक्षा चतुर्थकाल के कर्मभूमि के प्रारम्भ का भी बाल मोटा था पुनः आज पंचम काल के मनुष्यों का बाल तो उससे भी मोटा ही होगा। आज के अनुसंधानप्रिय विद्वानों का कर्तव्य है कि आज के बाल की मोटाई के हिसाब से ही आगे के अंगुल, पाद, हाथ आदि बना कर योजन के हिसाब को समझने की कोशिश करें।

'जम्बूद्वीप पण्णत्ति' की प्रस्तावना के २० पेज पर श्री लक्ष्मीचन्द जैन एम. एस. सी.' ने कुछ स्पष्टीकरण किया है वह पढ़ने योग्य है। देखिये—

'इस योजन की दूरी आज-कल के रैखिक माप में क्या होगी ?'

यदि हम २ हाथ = १ गज मानते हैं तो स्थूलरूप से १ योजन ८०००००० गज के बराबर अथवा ४५४५.४५ मील (Miles) के बराबर प्राप्त होता है।

यदि हम १ कोस को आजकल के २ मील के समान मान लें, तो १ योजन ४००० मील (Miles) के बराबर प्राप्त होता है।

कर्मभूमि के बालाग्र का विस्तार आजकल के सूक्ष्म यंत्रों द्वारा किये गये मापों के अनुसार १/५०० इंच से लेकर १/२०० इंच तक होता है। यदि हम इस प्रमाण के अनुसार योजन का माप निकालें तो उपर्युक्त प्राप्त प्रमाणों से अत्यधिक भिन्नता प्राप्त होती है। बालाग्र का प्रमाण १/५०० इंच मानने पर १ योजन ४९६४८४८ मील प्रमाण आता है। कर्मभूमि का बालाग्र १/३०० इंच मानने से योजन ८२७४७.४७ मील के बराबर पाया जाता है बालाग्र को १/२०० इंच प्रमाण मानने से योजन का प्रमाण और भी बढ़ जाता है।"

इसलिये एक महायोजन में स्थूलरूप में ४००० मील समझना चाहिये। किन्तु यह लगभग प्रमाण है। वास्तव में एक महायोजन में इससे अधिक ही मील होंगे ऐसा हमारा अनुमान है। इस प्रकार से तिलोयपण्णत्ति, जम्बूद्वीपपण्णत्ति, त्रिलोकसार, श्लोकवार्तिक आदि ग्रन्थों पर दृढ़ श्रद्धा रखते हुए अपने सम्यक्त्व को सुरक्षित रखना चाहिये। जब तक केवली, श्रुतकेवली के चरणों का सांनिध्य प्राप्त न हो तब तक अपने मन को चंचल और अश्रद्धालु नहीं करना चाहिये।

इत्यलं विस्तरेण

—मोतीचन्द जैन सर्राफ

परमविदुषी पू० आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी

जन्म : टिकैतनगर (बाराबंकी) सन् १९३४ वि.सं. १९९१
असोज शु. १५ (शरद पू.)

क्षुल्लिका दीक्षा : आ. श्री देशभूषणजी से श्री महावीरजी में
सं. २००९ चैत्र कृ. १

आर्यिका दीक्षा : आ. श्री वीरसागरजी से माधोराजपुर, (राज.) में
सं. २०१३ वै. कृ० २

लेखिका का संक्षिप्त परिचय

अष्टसहस्री आदि महान् क्लिष्ट ग्रन्थों की हिन्दी टीकाकार सुप्रसिद्ध लेखिका, महान् विदुषी, न्यायप्रभाकर, सिद्धान्त वाचस्पति परम पूज्य आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती माताजी का जन्म सन् १९३४ वि० सं० की शरद् पूर्णिमा को टिकैतनगर (जिला बाराबंकी) उ० प्र० में हुआ था। आपके पिता श्री छोटेलाल जैन, टिकैतनगर के एक प्रसिद्ध व्यवसायी रहे हैं। आपकी माता मोहनी देवी (वर्तमान में आर्यिका श्री रत्नमतीजी) प्रारम्भ से ही धर्मनिष्ठ रही हैं।

पूज्य माताजी ने वि० सं० २००७ में क्षुल्लिका दीक्षा एवं वि० सं० २०१३ में आर्यिका दीक्षा लेकर सम्पूर्ण भारतवर्ष की पदयात्रा करके ज्ञानगंगा प्रवाहित की है।

पूज्य माताजी का सारा जीवन अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग में रहा है। निरन्तर पठन-पाठन ही आपका प्रमुख व्यसन-सा रहा है। इसी कारण अनेकों शिष्यों को न्याय, व्याकरण, छन्द, अलंकार, सिद्धान्त आदि विषयों में पारंगत बनाकर अपने समान आर्यिका पद पर ही नहीं प्रत्युत् अपने से पूज्य मुनि पद पर भी आसीन कराया है।

साहित्य निर्माण का अनुपम कार्य

प्रकाशित ग्रन्थों के नाम

१. अष्टसहस्री (प्रथम भाग हिन्दी सहित), २. जैन ज्योतिर्लोक, ३. त्रिलोक-भास्कर, ४. सामायिक, ५. न्यायसार, ६. भगवान् महावीर कैसे बने, ७. जम्बू-द्वीप मंडल पूजन विधान, ८. तीर्थङ्कर महावीर और धर्मतीर्थ, ९. श्री वीर जिनस्तुति, १०. ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर, ११. द्रव्यसंग्रह (पद्यानुवाद सहित), १२. आत्मा की खोज, १३. जंबूद्वीप, १४. बालविकास भाग १, १५. बालविकास भाग २, १६. बालविकास भाग ३, १७. बालविकास भाग ४, १८. समाधिशतक, १९. आर्यिका, २०. व्रतविधि एवं पूजा, २१. इन्द्रध्वज-विधान, २२. प्रतिज्ञा, २३. प्रवचननिर्देशिका २४. चौबीस तीर्थङ्कर, २५. आराधना, २६. शिक्षण पद्धति, २७. पंचपरमेष्ठी विधान, २८. तीस चौबीसी विधान, २९. भगवान् बाहुबली, ३०. रत्नकरण्ड पद्यावली, ३१. प्रभावना,

३२. ऋषिमंडल पूजा विधान, ३३. शांतिनाथ पूजा विधान, ३४. नित्य पूजा, ३५. सुदर्शन मेरु पूजा, ३६. एकांकी, ३७. तीर्थङ्करत्रय पूजा, ३८. भगवान् वृषभदेव, ३९. रोहिणी नाटक, ४०. संस्कार, ४१. जीवनदान, ४२. उपकार, ४३. परीक्षा, ४४, नियमसार पद्यावली, ४५. दिगम्बर मुनि, ४६. जैन भारती, ४७. अभिषेक पूजा, ४८. बाहुबली पूजा, ४९. बाहुबली नाटक, ५०. योगचक्रेश्वर बाहुबली, ५१. कामदेव बाहुबली (अनेक भाषाओं में), ५२. बाहुबली पूजा एवं स्तोत्र, ५३. जंबूद्वीप गाइड।

अप्रकाशित ग्रन्थ

१. अष्टसहस्री भाग २, २. अष्टसहस्री भाग ३, ३. अष्टसहस्री भाग ४, ४. मूलाचार (संस्कृत टीका सहित) हिन्दी अनुवाद पूर्वार्ध, ५. मूलाचार उत्तरार्ध, ६. नियमसार (सटीक अर्थ सहित), ७. लघीयस्त्रयादि (स्वोपज्ञवृत्ति सहित), ८. लघीयस्त्रयादि (तात्पर्यवृत्ति सहित), ९. भावसंग्रह (अर्थ सहित), १०. भावत्रिभंगी (अर्थ सहित), ११. आस्रव त्रिभंगी (अर्थ सहित), १२. अष्टसहस्री सार, १३. पंचमेरु विधान, १४. जिनगुण सम्पत्ति विधान, १५. दीपावली पूजन, १६. तीर्थङ्कर स्तोत्र, १७. अध्यात्मसार भाग १, २, ३, १८. सत्य की परख, १९. मुक्तिपथ, २०. श्रावकधर्म, २१. ध्यान साधना, २२. भावना (सोलह भावना), २३. दशधर्म, २४. वर्षायोग, २५. धरती के देवता, २६. जीवस्थानी २७. गति आगति, २८. बालभारती भाग १, २, ३, २९. नारी आलोक भाग' १, २, ३, ३०. नियमसार कलश, ३१. कुंदकुंद का भक्ति राग, ३२. दिगम्बर जैनाचार्य, ३३. हस्तिनापुर परिचय, ३४. गणधरवलय विधान एवं स्तोत्र, ३५. पात्रकेसरी स्तोत्र, ३६. आलाप पद्धति, ३७. आप्तमीमांसा (पद्यावली) ३८. स्तोत्र संग्रह (पंचमेरु स्तुति आदि), ३९. गुरुभक्ति (आचार्यों की स्तुतियाँ) ४०. चर्चासार, ४१. सप्त परमस्थान, ४२. व्रतविधि कुसुमावली भाग १, २, ३, ४३. आटे का मुर्गा, ४४. शील धुरंधर (सेठ सुदर्शन), ४५. सती चंदना (नाटक), ४६. आ० वीरसागर चरित (संस्कृत-हिन्दी), ४७. रोहिणी कथा (हिन्द अनुवाद), ४८. तीस चौबीसी स्तोत्र (संस्कृत-हिन्दी), ४९. ग्यारह स्थान, ५०. कातंत्र व्याकरण, ५१. जैनेन्द्र प्रक्रिया व्याकरण—पूर्वार्ध।

कन्नड़ रचनाएं

१. बाहुबली स्तुति, २. भद्रबाहुस्वामी स्तुति, ३. बारह भावना।

हस्तिनापुर **मोतीचन्द जैन शास्त्री, न्यायतीर्थ**

जम्बूद्वीप

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ॥

अनादिसिद्ध अनंतानंत आकाश के मध्य में चौदह राजू ऊंचा, सर्वत्र सात राजू मोटा, तलभाग में पूर्व पश्चिम सात राजू चौड़ा, घटते हुए मध्य में एक राजू चौड़ा, पुनः बढ़ते हुए ब्रह्म स्वर्ग तक पाँच राजू चौड़ा और आगे घटते-घटते सिद्ध लोक के पास एक राजू चौड़ा ऐसा पुरुषाकार लोकाकाश है।

इसमें मध्यलोक एक राजू चौड़ा और एक लाख चालीस योजन ऊंचा है।

जंबूद्वीप का विस्तार—मध्यलोक में असंख्यात द्वीप-समूहों से वेष्टित गोल तथा जंबूवृक्ष से युक्त जंबूद्वीप स्थित है। यह एक लाख योजन विस्तार वाला है।

जंबूद्वीप की परिधि—तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताईस योजन, तीन कोश, एक सौ अट्ठाईस धनुष और कुछ अधिक साढ़े तेरह अंगुल है अर्थात् यो० ३१६२२७ को० ३ ध० १२८ अंगुल १३$\frac{1}{2}$ है। लगभग १२६४९०८००६ मील।

जंबूद्वीप का क्षेत्रफल—सात सौ नब्बे करोड़, छप्पन लाख, चौरानवे हजार, एक सौ पचास ७९०५६९४१५०, योजन है। अर्थात् तीन नील, सोलह खरब, बाईस अरब, सतहत्तर करोड़, छयासठ लाख (३१६,२२,७७,६६,००,०००) मील है।

जंबूद्वीप की जगती—आठ योजन (३२००० मील) ऊंची, मूल में बारह (४८००० मील), मध्य में आठ (३२००० मील) और ऊपर में चार महा योजन (१६०००) मील विस्तार वाली है। जंबूद्वीप के परकोटे को जगती कहते हैं। यह जगती मूल में वज्रमय, मध्य में सर्वरत्नमय और शिखर पर वैडूर्यमणि से निर्मित है, इस जगती के मूल प्रदेश में पूर्व-

पश्चिम की ओर सात-सात गुफायें हैं, तोरणों से रमणीय, अनादि-निधन ये गुफायें महानदियों के लिए प्रवेश द्वार हैं।

वेदिका—जगती के उपरिम भाग पर ठीक बीच में दिव्य सुवर्णमय वेदिका है। यह दो कोश ऊंची और पाँच सौ धनुष चौड़ी है अर्थात् ऊंचाई २ को० और चौड़ाई ५०० ध० है।

जगती के उपरिम विस्तार चार योजन में वेदी के विस्तार को घटाकर शेष को आधा करने पर वेदी के एक पार्श्व भाग में जगती का विस्तार है यथा $\frac{३२०००-५००}{२}$ = १५७५० धनुष।

विशेष—दो हजार धनुष का एक कोश और चार कोश का एक योजन होने से चार योजन में ३२००० धनुष होते हैं अतः ३२००० धनुष में ५०० धनुष घटाया है।

वेदी के दोनों पार्श्व भागों में उत्तम वापियों से संयुक्त वन खंड हैं। वेदी के अभ्यंतर भाग में महोरग जाति के व्यंतर देवों के नगर हैं। इन व्यंतर नगरों के भवनों में अकृत्रिम जिनमंदिर शोभित हैं।

जंबूद्वीप के प्रमुख द्वार—चारों दिशाओं में क्रम से विजय, वैजयंत, जयंत और अपराजित ये चार गोपुर द्वार हैं। ये आठ महा योजन (३२००० मील) ऊंचे और चार योजन (१६००० मील) विस्तृत हैं। सब गोपुर द्वारों में सिंहासन, तीनछत्र, भामंडल और चामर आदि से युक्त जिनप्रतिमायें स्थित हैं। ये द्वार अपने-अपने नाम के व्यंतर देवों से रक्षित हैं। प्रत्येक द्वार के उपरिम भाग में सत्रह खन (तलों) से युक्त, उत्तम द्वार भवन हैं।

विजय आदि देवों के नगर—द्वार के ऊपर आकाश में बारह हजार योजन लम्बा, छह हजार योजन विस्तृत विजय देव का नगर है। ऐसे ही वैजंयत आदि के नगर हैं। इनमें अनेकों देव भवनों में जिनमंदिर शोभित हैं। विजय आदि देव अपने-अपने नगरों में देवियों और परिवार देवों से युक्त निवास करते हैं।

वनखंड वेदिका—जगती के अभ्यंतर भाग में पृथ्वी तल पर दो कोस विस्तृत आम वृक्षों से युक्त वन खंड हैं। सुवर्ण रत्नों से निर्मित उस उद्यान की वेदिका दो कोस ऊंची, पाँच सौ धनुष चौड़ी है।

जंबूद्वीप का सामान्य वर्णन

जंबूद्वीप के भीतर दक्षिण की ओर भरत क्षेत्र है। उसके आगे हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत ये सात क्षेत्र हैं। हिमवान, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मि और शिखरी ये छह पर्वत हैं।

दक्षिण में भरतक्षेत्र का विस्तार ५२६ $\frac{६}{१९}$ योजन है। भरतक्षेत्र से दूना हिमवान पर्वत है, उससे दूना हैमवत क्षेत्र है ऐसे विदेह क्षेत्र तक दूना-दूना विस्तार है। आगे आधा-आधा है।

भरतक्षेत्र के मध्य में पूर्व पश्चिम लंबा समुद्र को स्पर्श करता हुआ विजयार्ध पर्वत है।

हिमवान आदि छह कुलाचलों पर क्रम से पद्म, महापद्म, तिगिंच्छ, केशरी, पुण्डरीक ऐसे छह सरोवर हैं।

इन छह सरोवरों से गंगा-सिंधु, रोहित-रोहितास्या, हरित-हरिकांता, सीता-सीतोदा, नारी-नरकांता, सुवर्णकूला-रूप्यकूला और रक्ता-रक्तोदा ये चौदह नदियाँ निकलती हैं। जो कि एक-एक क्षेत्र में दो-दो नदी बहती हुई सात क्षेत्रों में बहती हैं।

विदेह क्षेत्र के बीचोंबीच में सुमेरु पर्वत

भरत क्षेत्र के छह खंड—हिमवान पर्वत के पद्मसरोवर से गंगा-सिंधु नदियाँ निकलकर नीचे कुण्ड में गिरकर विजयार्ध पर्वत की गुफाओं में प्रवेश करके दक्षिणभारत में आ जाती हैं और पूर्व पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर जाती हैं इसलिए भरत क्षेत्र के छह खंड हो जाते हैं।

इस प्रकार से जंबूद्वीप की यह सामान्य व्यवस्था है। इस जंबूद्वीप में तीन सौ ग्यारह पर्वत हैं। जिनमें एक मेरु, छह कुलाचल, चार गजदंत, सोलह वक्षार, चौंतीस विजयार्ध, चौंतीस वृषभाचल, चार नाभिगिरि, चार यमकगिरि, आठ दिग्गजेंद्र और दो सौ कांचनगिरि हैं। यथा—

$$१ + ६ + ४ + १६ + ३४ + ३४ + ४ + ४ + ८ + २०० = ३११$$

सतरह लाख बानवें हजार नब्बे नदियाँ हैं। चौंतीस कर्मभूमि, छह भोगभूमि, जम्बू, शाल्मलि ऐसे दो वृक्ष, चौंतीस आर्य खण्ड, एक सौ सत्तर म्लेच्छ खंड और पाँच सौ अड़सठ कूट हैं। ये सब कहाँ-कहाँ हैं ? इन सभी को इस पुस्तक में बताया गया है।

जंबूद्वीप का विशेष वर्णन

छह कुलाचल

हिमवान—हिमवानपर्वत भरतक्षेत्र की तरफ १४४७१$\frac{5}{19}$ योजन (५७८८५०५२-$\frac{12}{19}$ मील) लम्बा है और हैमवत क्षेत्र की तरफ २४९३२ $\frac{1}{19}$ योजन (९९७२८२१०$\frac{10}{19}$ मील) लम्बा है। इसकी चौड़ाई १०५२$\frac{12}{19}$ योजन (४२०८४२१$\frac{1}{19}$ मील) प्रमाण है। ऊंचाई १०० योजन (४००००० मील) प्रमाण है।

महाहिमवान—यह पर्वत ४२१०$\frac{10}{19}$ योजन (१६८४२१०५$\frac{5}{19}$ मील) विस्तार वाला है। हैमवत की तरफ इसकी लम्बाई ३७६७४$\frac{16}{19}$ योजन
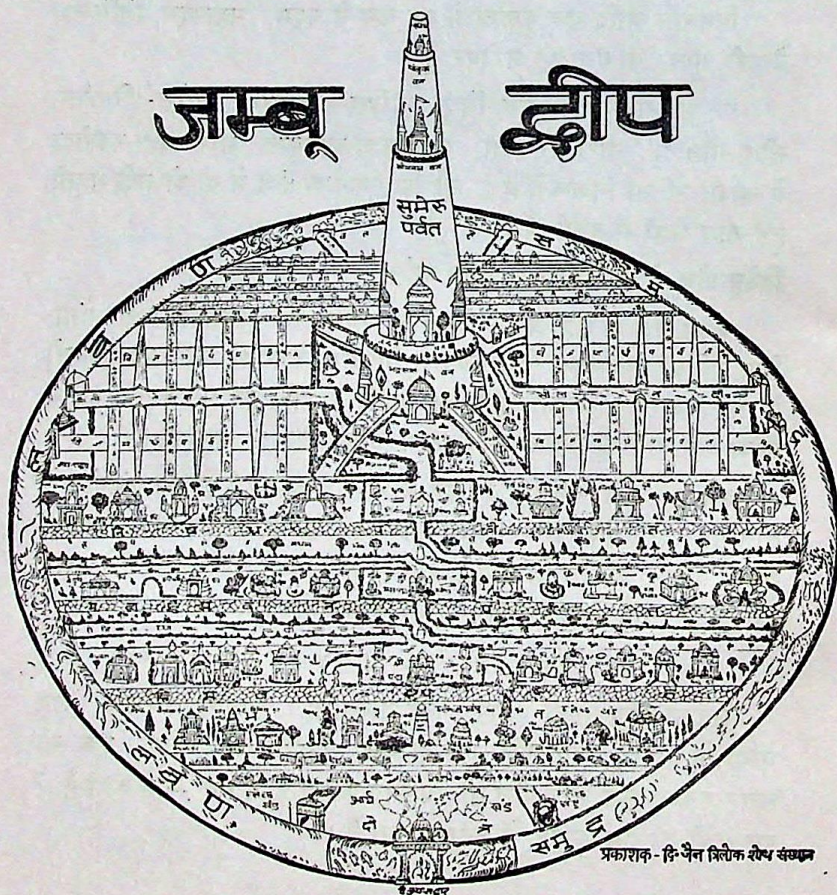
(१५०६९९३६८$\frac{8}{19}$ मील) है और हरिक्षेत्र की तरफ इसकी लम्बाई ५३९३१$\frac{6}{19}$ योजन (२१५७२५२६३$\frac{3}{19}$ मील) है। यह पर्वत २०० योजन (८००००० मी०) ऊंचा है।

निषध—यह पर्वत १६८४२$\frac{2}{19}$ योजन (६७३६८०००$\frac{1}{19}$मी०) विस्तृत है। इसकी हरिक्षेत्र की तरफ लंबाई ७३९०१$\frac{17}{19}$ योजन (२९५६०४३५७$\frac{17}{19}$ मील) एवं विदेह की तरफ की लंबाई ९४१५६$\frac{2}{19}$ यो०(३७६६२४४२१$\frac{1}{19}$ मील) है। इसकी ऊंचाई ४०० योजन (१६००००० मी०) है।

आगे का **नील पर्वत** निषध के प्रमाण वाला है, **रुक्मी पर्वत** महाहिमवान सदृश है और **शिखरी पर्वत** हिमवान के प्रमाण वाला है।

पर्वतों के वर्ण—हिमवान् पर्वत का वर्ण सुवर्णमय है आगे क्रम से चांदी, तपाये हुए सुवर्ण, वैडूर्यमणि, चांदी और सुवर्ण सदृश हैं।

ये पर्वत ऊपर और मूल में समान विस्तार वाले हैं एवं इनके पार्श्वभाग चित्र विचित्र मणियों से निर्मित हैं।

छह पर्वतों के कूट

हिमवान् के ११ कूट—सिद्धायतन, हिमवत, भरत, इला, गंगा, श्रीकूट, रोहितास्या, सिंधु, सुरा देवी, हैमवत और वैश्रवण ये ११ कूट हैं। प्रथम सिद्धायतन कूट पूर्व दिशा में है उस पर जिनमंदिर है। बाकी १० कूटों में से स्त्रीलिंग नामवाची कूटों पर व्यंतर देवियां एवं अवशेष कूटों पर व्यंतरदेव रहते हैं। सभी कूट पर्वत की ऊंचाई के प्रमाण से चौथाई प्रमाण वाले होते हैं। जैसे हिमवान पर्वत १०० योजन (४००००० मी०) ऊंचा है तो इसके सभी कूट २५-२५ योजन ऊंचे हैं मूल में २५ योजन (१००००० मी०) विस्तृत, मध्य में १८$\frac{3}{4}$ यो० (७५००० मी०) और ऊपर १२$\frac{1}{2}$ यो० (५०००० मी०) विस्तार है। इनके ऊपर देवों के व देवियों के भवन बने हुए हैं।

महाहिमवान के आठ कूट—सिद्धकूट महाहिमवत्, हैमवत, रोहित ह्रीकूट, हरिकान्ता, हरिवर्ष और वैडूर्य ये आठ कूट हैं। ये ५० योजन (२००००० मील) ऊँचे, मूल में ५० यो०, ऊपर में २५ यो० (१००००० मील) विस्तृत हैं।

निषध के ९ कूट—सिद्धकूट, निषध, हरिवर्ष, पूर्वविदेह, हरित, धृति, सीतोदा, अपरविदेह और रुचक ये ९ कूट हैं। ये १०० यो० (४०००००

---

१. इसका विभाग २४९३१$\frac{18}{19}$ है। लोकविभाग श्लो० ५७।

मील) ऊंचे, मूल में १०० यो० विस्तृत, मध्य में ७५ यो० (३००००० मील) और ऊपर में ५० यो० (२००००० मील) विस्तृत हैं।

नील के ९ कूट—सिद्ध, नील, पूर्वविदेह, सीता, कीर्ति, नरकान्ता, अपरविदेह, रम्यक और अपदर्शन ये ९ कूट हैं। ये कूट भी १०० योजन ऊंचे हैं, मूल में १०० योजन विस्तृत और ऊपर में ५० योजन विस्तृत हैं। अर्थात् क्रम से ४००००० मील ऊंचे, मूल में इतने ही चौड़े तथा मध्य में ३००००० मील और ऊपर में २००००० मील चौड़े हैं।

रुक्मि के ८ कूट—सिद्ध, रुक्मि, रम्यक, नारी, बुद्धि, रुप्यकूला, हैरण्यवत और मणिकाँचन ये ८ कूट हैं। ये ५० यो० ऊंचे, ५० योजन विस्तृत और ऊपर में २५ योजन विस्तृत हैं। अर्थात् २००००० मील ऊंचे, चौड़े मध्य में १५०००० मील, और ऊपर में १००००० मील विस्तृत हैं।

शिखरी के ११ कूट—सिद्ध, शिखरी, हैरण्यवत, रसदेवी, रक्ता, लक्ष्मी, सुवर्ण, रक्तवती, गंधवती, ऐरावत और मणिकांचन ये ११ कूट हैं। ये २५ योजन (१००००० मील) ऊंचे, २५ योजन विस्तृत, मध्य में १८$\frac{3}{4}$ योजन (७५००० मील) और ऊपर में १२$\frac{1}{2}$ योजन (५०००० मील) विस्तृत हैं।

विशेष—सभी कूटों में पूर्व दिशा के सिद्धकूट में जिन भवन हैं। स्त्रीलिंग वाची कूटों में व्यन्तर देवियां हैं और शेष में व्यंतर देवों के भवन बने हुए हैं।

वनखंड—सभी पर्वतों के नीचे (तलहटी में) और ऊपर दोनों तरफ वनखण्ड हैं। और इनके कूटों के नीचे चारों तरफ वनखंड हैं। ये वनखंड दो कोश चौड़े हैं एवं पर्वत पर्यन्त लम्बे हैं। इन वनखंडों की वेदिका पांच सौ धनुष चौड़ी, दो कोस ऊंची हैं। ये वेदिकायें और वनखंड, सभी पर्वत, नदी, सरोवर आदि में सर्वत्र सदृश मध्य प्रमाण वाले हैं।

छह सरोवर

१ पद्म सरोवर—यह सरोवर हिमवान् पर्वत के मध्य भाग में है। ५०० यो० चौड़ा, इससे दुगुना १००० यो० लम्बा और १० यो० गहरा है। इसके मध्य भाग में एक योजन का एक कमल है। इसके एक हजार ग्यारह पत्र हैं। इसकी नाल ब्यालीस कोस ऊंची, एक कोश मोटी है। यह वैडूर्यमणि की है। इसका मृणाल तीन कोश मोटा रुप्यमय-श्वेतवर्ण का है। इसका नाल ४२ कोश अर्थात् १०$\frac{1}{2}$ योजन प्रमाण है अतः दस योजन

नाल तो जल में है और दो कोश जल के ऊपर है। कमल की कर्णिका दो कोश ऊंची और एक कोश चौड़ी है। इस कर्णिका के ऊपर श्रीदेवी का भवन बना हुआ है। यह भवन एक कोश लम्बा, अर्द्ध कोश चौड़ा और पौन कोश ऊंचा है। इसमें श्रीदेवी निवास करती हैं। इसकी आयु एक पल्य प्रमाण है।

श्री देवी के परिवार कमल—एक लाख चालीस हजार एक सौ पंद्रह (१४०११५) परिवार कमल हैं वे इसी सरोवर में हैं। इन परिवार कमलों की नाल दस योजन प्रमाण है अर्थात् इनकी नाल जल से दो कोश ऊपर नहीं है जल के बराबर है। इन कमलों का विस्तार आदि मुख्य कमल से आधा-आधा है। इनमें रहने वाले परिवार देवों के भवनों का प्रमाण भी श्रीदेवी के भवन के प्रमाण से आधा है।

२. महापद्म सरोवर—यह सरोवर महाहिमवान् पर्वत पर है। यह १००० योजन चौड़ा, २००० योजन लम्बा और २० योजन गहरा है। इसके मध्य में जो मुख्य कमल है वह दो योजन विस्तृत है। इसकी कर्णिका दो कोस की है और इसमें ह्रीदेवी का भवन है। वह दो कोश लम्बा, डेढ

पद्म द्रह
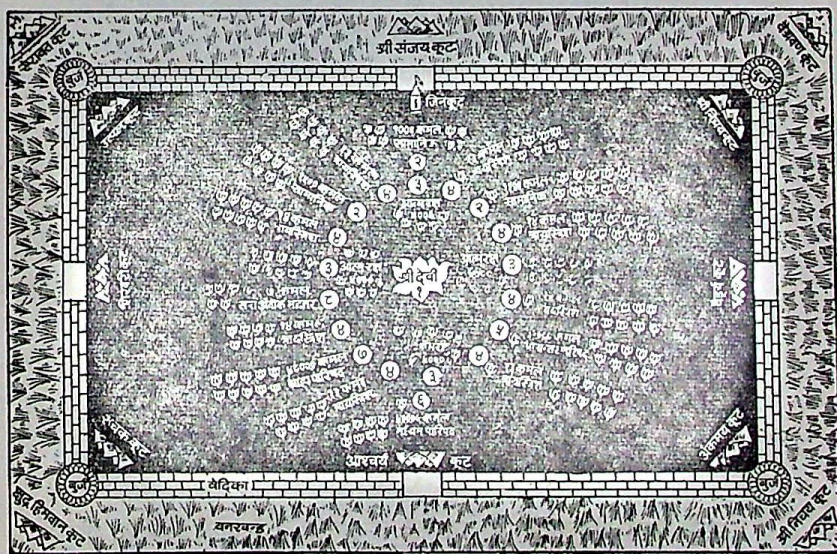
कोश ऊंचा और एक कोश चौड़ा है। इस देवी के परिवार कमल २८०२०३ हैं। इन परिवार कमलों का एवं इनके भवनों का प्रमाण मुख्य कमल से आधा-आधा है। इसके मुख्य कमल पर ह्रीदेवी निवास करती है। इसकी आयु भी एक पल्य प्रमाण है।

३. तिगिंच्छ सरोवर—यह सरोवर निषध पर्वत के मध्य में है। यह २००० यो० चौड़ा, ४००० योजन लंबा एवं ४० यो० गहरा है। इस सरोवर में जो मुख्य कमल है वह चार योजन विस्तृत है। इसकी कर्णिका चार कोश की है उसमें बना हुआ धृति देवी का भवन चार कोश लम्बा, २ कोश चौड़ा और ३ कोश ऊंचा है। इसके परिवार कमल ५६०४६० हैं। इन कमलों का प्रमाण तथा इनके भवनों का विस्तार आदि मुख्य कमल से आधा-आधा है। इसके मुख्य कमल में 'धृतिदेवी' रहती है, इसकी आयु भी एक पल्य की है।

पद्म सरोवर का क्षेत्रफल आदि–५०० यो० चौड़ा, १००० यो० गहरा है। इसका क्षेत्रफल–५०० × १००० = ५०००००यो० है। घनफल ५००००० × १० = ५००००० यो० है। क्षेत्र० की मील बनाने से ५००००० × ४००० = २,००,००,००,००० (दो अरब) मील पद्म सरोवर का क्षेत्रफल है।

पद्मद्रहका मध्यवर्ती कमल
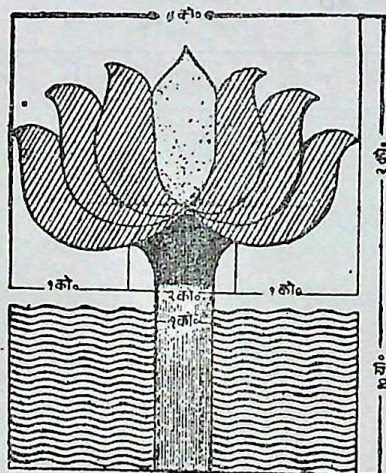
इसमें मुख्य कमल एक योजन का अर्थात् २००० कोश (४००० मील) का है शेष इसके आधे-आधे प्रमाण के हैं। ये कमल १४०११५ हैं। मुख्य

कमल की नाल १०-१/२ यो० है अतः जल से दो कोश ऊपर है दस योजन जल में डूबी हैं। परिवार कमलों की नाल जल प्रमाण ही है, ऊपर निकली हुई नहीं है।

महापद्म सरोवर का क्षेत्रफल आदि–१००० × २००० = २०,००,००० (बीस लाख) यो० क्षेत्रफल है। २०,००,००० × ४००० = ८,००,००,००,००० (आठ अरब मील) है इसमें मुख्य कमल दो योजन का, ८००० मील का है। शेष इसके आधे प्रमाण के हैं। ये कमल २८०२३० हैं।

तिगिंच्छ सरोवर का विशेष विस्तार–२००० × ४००० = ८०००००० योजन है। इसके मील ८०००००० × ४००० = ३२,००,००,००,००० (बत्तीस अरब) होते हैं।

इसमें मुख्य कमल चार योजन का है अर्थात् ४ × ४००० = १६००० मील का है। शेष इससे आधे-आधे भाग प्रमाण के हैं। वे कमल ५६०४६० हैं

४. केसरी सरोवर—इस सरोवर का सारा वर्णन तिगिंच्छ के सदृश है। अन्तर इतना ही है कि यहाँ 'बुद्धि' नाम की देवी निवास करती है।

५. पुंडरीक सरोवर—इस सरोवर का सारा वर्णन 'महापद्म' के सदृश है। अन्तर इतना ही है कि इसके कमल पर कीर्तिदेवी निवास करती है।

६. महापुंडरीक—इस सरोवर का सारा वर्णन पद्म सरोवर के सदृश है। यहाँ 'लक्ष्मी' नाम की देवी रहती है।

विशेष—सरोवर के चारों ओर वेदिका से वेष्ठित वनखण्ड हैं। वे अर्धयोजन चौड़ हैं। सरोवर के कमल पृथ्वीकायिक हैं। वनस्पतिकायिक नहीं हैं। इनमें बहुत ही उत्तम सुगन्धि आती है।

जिनमन्दिर—इन सरोवरों में जितने कमल कहे हैं वे महाकमल हैं। इनके अतिरिक्त क्षुद्रकमलों की संख्या बहुत है। इन सब कमलों के भवन में एक-एक जिनमन्दिर हैं। इसलिये जितने कमल हैं उतने ही जिन मन्दिर हैं।

भरतक्षेत्र

विजयार्ध पर्वत

भरतक्षेत्र के बीच में पूर्व-पश्चिम लम्बा विजयार्ध पर्वत है। दक्षिण की तरफ इसकी लम्बाई ९७४८-$\frac{११}{१९}$ योजन (३८९९४३१५-$\frac{१५}{१९}$ मील)

है। उत्तर भरत की तरफ इस पर्वत की लम्बाई १०७२०–$\frac{११}{१९}$ योजन (४२८८२३१५–$\frac{१५}{१९}$ मील) है। यह पर्वत ५० योजन (२०००० मी०)

चौड़ा और २५ योजन (१००००० मील) ऊँचा है। उसकी नींव सवा छह योजन है। इस पर्वत के दक्षिण-उत्तर दोनों तरफ पृथ्वीतल से १० योजन (४,०००० मी०) ऊपर जाकर दस योजन विस्तीर्ण उत्तम श्रेणी हैं। उनमें दक्षिण श्रेणी में पचास और उत्तर श्रेणी में साठ ऐसी विद्याधरों की ११० नगरियाँ हैं। उसके ऊपर दोनों तरफ दस योजन जाकर दस योजन विस्तीर्ण श्रेणियाँ हैं। इनमें आभियोग्य जाति के देवों के नगर हैं। इन आभियोग्यपुरों से पाँच योजन (२०,००० मी०) ऊपर जाकर दस योजन (४०,००० मी०) विस्तीर्ण विजयार्ध पर्वत का उत्तम शिखर है।

उस समभूमि भाग में सुवर्ण मणियों से निर्मित दिव्य नौ कूट हैं। उन कूटों में पूर्व की ओर से सिद्धकूट, भरतकूट, खंडप्रपात, मणिभद्र, विजयार्धकुमार, पूर्णभद्र, तिमिश्रगुहकूट, भरतकूट और वैश्रवण ऐसे नौ कूट हैं। ये सब $६\frac{१}{४}$ योजन (२५००० मी०) ऊँचे, मूल में इतने ही चौड़े

विजयार्ध पर्वत
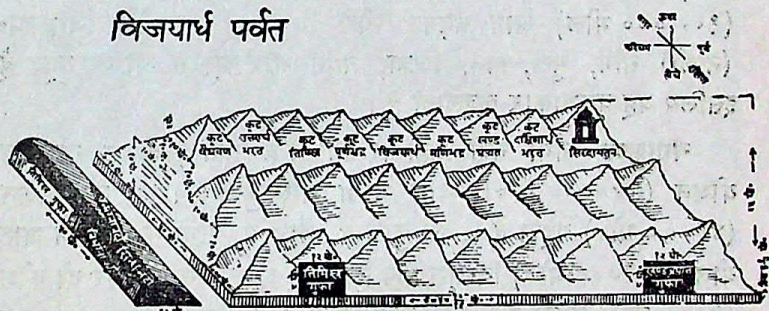
और ऊपर भाग में कुछ अधिक तीन यो० (१२००० मी०) चौड़े हैं। सिद्ध कूट में जिन-भवन एवं शेष कूटों के भवनों में देव देवियों के निवास हैं।

दो महागुफायें—इस विजयार्ध पर्वत में ८ योजन ऊंची (३२००० मी०), ५० योजन (२००००० मी०) लंबी और १२ योजन (४८०००) मी० विस्तृत दो गुफायें हैं। इन गुफाओं के दिव्य युगल कपाट आठ यो० (३२००० मी०) ऊंचे, छह यो० (२४००० मी०) विस्तीर्ण हैं। गंगा-सिंधु नदियाँ इन गुफाओं से निकलकर बाहर आकर लवण समुद्र में प्रवेश करती हैं। इन गुफाओं के दरवाजे को चक्रवर्ती अपने दण्डरत्न

से खोलते हैं और गुफा के भीतर काकिणीरत्न से प्रकाश करके सेना सहित उत्तर म्लेच्छों में जाते हैं चक्रवर्ती द्वारा इस पर्वत तक इधर के तीन खंड जीत लेने से आधी विजय हो जाती है अतः इस पर्वत का विजयार्ध यह नाम सार्थक है। ऐसे ही ऐरावत क्षेत्र में विजयार्ध पर्वत है।

गंगा-सिंधु नदी

हिमवान पर्वत के पद्म सरोवर की चारों दिशाओं में चार तोरण-द्वार हैं। उनमें पूर्व तोरण से गंगा नदी निकलती है। गंगा नदी का निर्गम स्थान वज्रमय है ६$\frac{1}{4}$ यो० (२५००० मील) विस्तृत, $\frac{1}{2}$ कोस (५०० मी०) अवगाह से सहित है। यह नदी यहाँ से निकल कर ५०० यो० (२००,०००० मी०) पूर्व की ओर जाती हुई गंगा कूट के दो कोश (२००० मील) इधर से दक्षिण की ओर पाँच सौ तेईस योजन (२०९२-००० मील) कुछ अधिक $\frac{1}{2}$ कोश आकर हिमवान् पर्वत के तट पर स्थित जिह्विका के अन्दर प्रविष्ट होकर, पर्वत की तलहटी से पच्चीस यो० (१००,००० मील) आगे बढ़कर नीचे गिरती है। उपर्युक्त जिह्विका-(नाली) सींग, मुख, कान, जिह्वा, नयन और भ्रूसे से गौ के सदृश है इसलिये यह वृषभाकार कहलाती है।

गंगाकुण्ड—गंगा नदी जहाँ पर गिरती हैं वहाँ पृथ्वीतल पर साठ योजन (२४०००० मी०) व्यास वाला गोल कुण्ड है। यह दस योजन (४०००० मी०) गहरा है। इस कुण्ड के बीच में रत्नों से विचित्र आठ योजन (३२००० मी०) विस्तृत द्वीप है। यह धवल जल से ऊपर दो कोश (२००० मी०) ऊंचा है। इस महाद्वीप के मध्यभाग में उत्तम वज्रमय पर्वत है। यह दस योजन (४०००० मी०) ऊंचा, मूल में चार (१६००० मी०) मध्य में दो (८००० मी०) और ऊपर एक योजन (४०००) मी० चौड़ा है। इसके ऊपर रत्ननिर्मित गंगाकूट नाम से प्रसिद्ध दिव्य भवन है। वह भवन मूल में ३०००, मध्य में २००० और ऊपर १००० धनुष प्रमाण विस्तृत है तथा २००० धनुष ऊंचा कूट के सदृश है। उसमें स्वयं गंगा देवी रहती है। उस भवन के ऊपर कमलासन पर जटा मुकुटरूप शेखर से युक्त जिनेंद्र प्रतिमायें हैं। उन प्रतिमाओं का अभिषेक करते हुए के समान गंगा नदी गंगाकूट पर गिरती है। कुण्ड में चारों ओर तोरण द्वार हैं। यह नदी दक्षिण तोरणद्वार से निकल कर आगे के भूमिभागों में

---

१. यह कोश भी महायोजन के हिसाब से महाकोश प्रमाणवाला है।
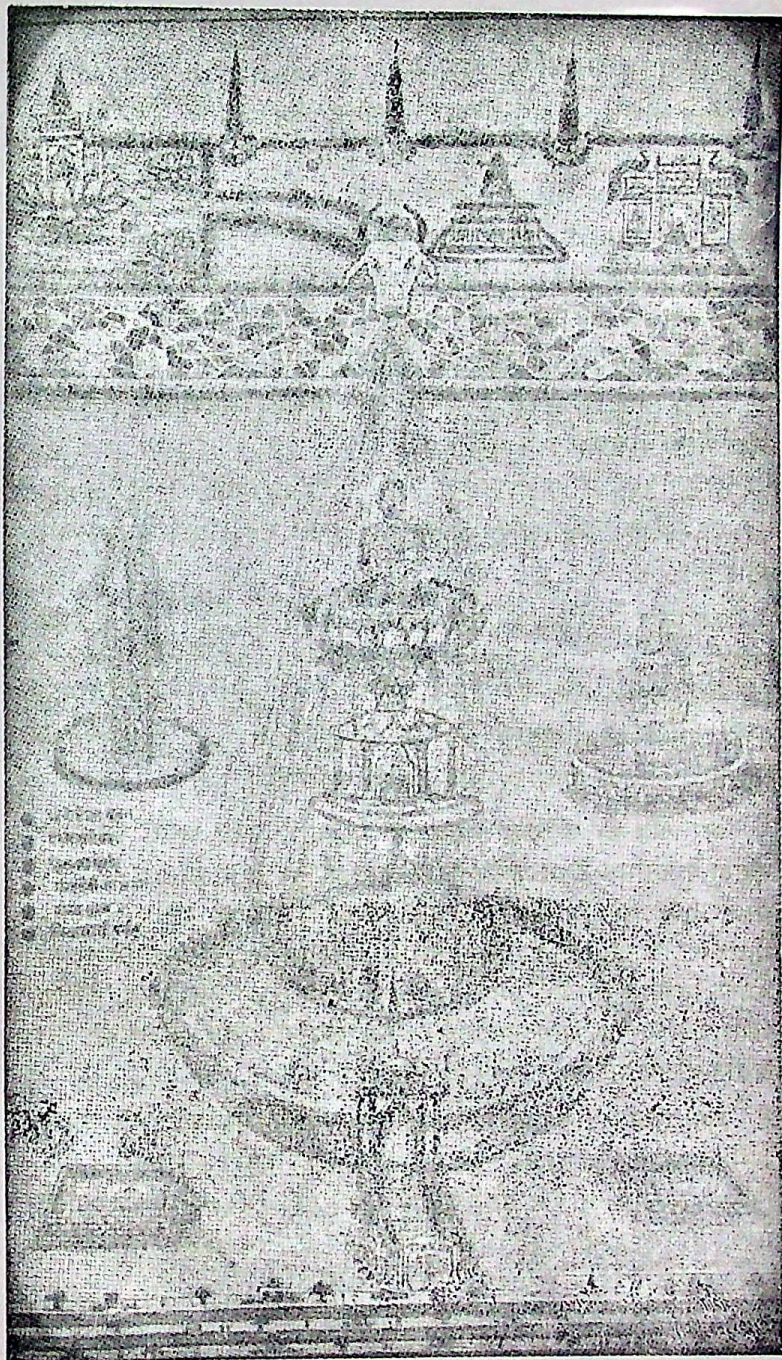
कुटिलता को प्राप्त होती हुई विजयार्ध की गुफा में आठ योजन (३२००० मी०) विस्तृत होकर प्रविष्ट होती है।

अन्त में चौदह हजार परिवार नदियों से संयुक्त होकर पूर्व की ओर जाती हुई लवणसमुद्र में प्रविष्ट हुई है। गंगा के निर्गम स्थान का तोरण-द्वार ६$\frac{1}{4}$ यो० (२५००० मी०) चौड़ा और ९$\frac{3}{8}$ यो० (३७५०० मी०) ऊंचा है। लवण समुद्र के प्रवेश स्थान पर गंगा का तोरणद्वार ९३$\frac{3}{4}$ यो०-तेरानवे योजन और तीन कोश (३७५००० मी०) ऊंचा है। आधा योजन (२००० मी०) अवगाह से सहित है तथा ६२$\frac{1}{2}$ योजन (२५०००० मी०) विस्तृत है। इन तोरणों पर जिनेन्द्र प्रतिमायें स्थित हैं।

'गंगा[1] नदी के कुण्डों से उत्पन्न हुई परिवार नदियाँ ढाई म्लेच्छ-खंडों में ही हैं आर्यखंड में नहीं हैं।'

गंगा[2] कुण्ड में गिरते समय गंगा नदी की धारा की मोटाई २५ यो० (१००००० मील) है और दीर्घता (ऊंचाई) १०० यो० (४००००० मील है।

इसप्रकार से संक्षेप में गंगा नदी का वर्णन हुआ है। ऐसे ही पद्म सरोवर के पश्चिम तोरणद्वार से सिंधु नदी निकल कर सिंधुकूट में गिर-कर आगे पश्चिम समुद्र में प्रवेश करती है। इन दोनों नदियों के दोनों पार्श्व भागों में वनखंड हैं और वेदिका हैं ये वनखंड अत्रुटितरूप से विजयार्ध की गुफा के अन्दर से बाहर तक चले गये हैं।

भरतक्षेत्र के छः खंड—बीच के विजयार्ध पर्वत और इन दोनों नदियों के निमित्त से भरतक्षेत्र के छह खंड हो गये हैं। भरत के ५२६$\frac{6}{19}$ यो० (२१०५२६३$\frac{3}{19}$ मील) में विजयार्ध की चौड़ाई ५० यो० (२००००० मील) को घटाकर २ का भाग देने से दक्षिणभरत और उत्तरभरत का प्रमाण निकल आता है। यथा—(५२६$\frac{6}{19}$५०) ÷ २ = २३८$\frac{8}{19}$ यो० दक्षिण भरत के मध्य का भाग आर्यखंड है और शेष पाँच खंड म्लेच्छ खंड हैं। अर्थात् दक्षिण भरत ९५२६३१$\frac{11}{19}$ मील है।

वृषभाचल—उत्तर भरत के मध्य के खंड में एक पर्वत है जिसका नाम 'वृषभ' है। यह पर्वत १०० यो० (४००००० मील) ऊंचा है २५ यो० (१००००० मी०) नींव से युक्त मूल में १०० यो० (४००००० मी०) मध्य में ७५ यो० (३००००० मी०) और उपरिभाग में ५० योजन (२०००००

---

१. ति० प० पे० १९१। २. जंबू पृ० पृ० ४८।

मी०) विस्तार वाला है, गोल है। इस भवन के ऊपर 'वृषभ' नाम से प्रसिद्ध व्यंतर देव का भवन है उसमें जिनमंदिर है। इस पर्वत के नीचे तथा शिखर पर वेदिका और वनखंड हैं। चक्रवर्ती छह खंड को जीत कर गर्व से युक्त होता हुआ इस पर्वत पर जाकर प्रशस्ति लिखता है उस समय इसे सब तरफ प्रशस्तियों से भरा हुआ देखकर सोचता है कि मुझ समान अनंतों चक्रियों ने यह वसुधा भोगी है अतः अभिमान रहित होता हुआ दण्डरत्न से एक प्रशस्ति को मिटाकर अपना नाम इस पर्वत पर अंकित करता है।

आर्यखण्ड-म्लेच्छ खण्ड की व्यवस्था—भरत क्षेत्र के और ऐरावत क्षेत्र के आर्य खंडों में सुषमासुषमा से लेकर षट्काल परिवर्तन होता रहता है। प्रथम, द्वितीय, तृतीय काल में यहाँ भोगभूमि की व्यवस्था होती है और चतुर्थ काल में कर्मभूमि की व्यवस्था में चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलभद्र, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण ऐसे त्रेसठ शलाका पुरुष जन्म लेते हैं। इस बार यहाँ हुंडावसर्पिणी के दोष से नौ नारद और नौ रुद्र भी उत्पन्न हुए हैं। पुनः पंचम काल और छठा काल आता है। यहाँ अभी पंचम काल चल रहा है। इसमें धर्म का ह्रास होते-होते छठे काल में धर्म नहीं रहता है प्रायः मनुष्य पाशविक वृत्ति के बन जाते हैं।

विद्याधर को दोनों श्रेणियों की एक सौ दस नगरियों में और पाँच म्लेच्छ खंडों में चतुर्थ काल की आदि से लेकर अंत तक काल परिवर्तन होता है।

हैमवत क्षेत्र

रोहित रोहितास्या नदी

पद्म सरोवर के उत्तर तोरण द्वार से 'रोहितास्या' नदी निकल कर दो सौ छियत्तर योजन से कुछ अधिक (२७६ $\frac{6}{19}$) (११०४००० मील) दूर तक पर्वत के ऊपर बहती है। और रोहित् नदी महाहिमवान पर्वत के महापद्म सरोवर के दक्षिण द्वार से निकल कर १६०५ $\frac{5}{19}$ योजन (६४२१०५२-$\frac{12}{19}$ मील) प्रमाण पर्वत पर आकर नीचे गिरती है। इन रोहित-रोहितास्या के तोरण द्वार उद्गम स्थान में १२$\frac{1}{2}$ यो० (५०००० मील) चौड़े, १८$\frac{3}{4}$ यो० (७५००० मील) ऊँचे हैं और जहाँ गिरती है वहाँ के कुण्ड १२० यो० (४८०००० मील) विस्तृत हैं। इनके द्वीप १६ यो० (६४००० मील) विस्तृत और जल के ऊपर एक यो० (४००० मील ऊंचे हैं। उनमें

स्थित पर्वतों की ऊंचाई बीस यो० (८०००० मील) मूल वि० आठ यो० (३२००० मील) मध्य विस्तार चार यो० (१६००० मील) शिखर विस्तार दो यो० (८००० मील) है। इन दोनों नदियों में से रोहितास्या की धारा का विस्तार और दीर्घता गंगा नदी के समान है। तथा रोहित की धारा का विस्तार पचास यो० (२००००० मील) और दीर्घता (लंबाई) दो सौ योजन (८००००० मील) है। इनके ऊपर रोहित-रोहितास्या देवी के भवन बने हैं जो कि मूल में ६००० धनुष, मध्य में ४००० ऊपर में १००० धनुष विस्तृत है एवं ४००० धनुष ऊंचे हैं। इन भवनों की छत पर कमलासन पर जिनप्रतिमायें हैं। उन पर नदियों की धारा गिरती है। इन रोहित कूट और रोहितास्या कूट में रोहित्, रोहितास्या देवियाँ निवास करती हैं।
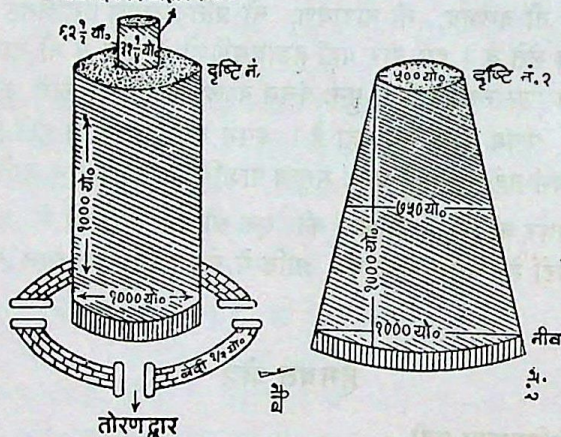
नाभिगिरि पर्वत—हैमवत क्षेत्र के बीचों-बीच में एक नाभिगिर पर्वत है। यह पर्वत गोल है, १००० यो० (४०००००० मी०) ऊंचा, १००० यो० मूल में और ऊपर विस्तृत है। यह पर्वत श्वेतवर्ण का है। इसका नाम 'श्रद्धावान' है। इस पर 'स्वाति' नामक व्यंतर देव का भवन, जिनमंदिर से सनाथ है।[1]

उपर्युक्त रोहितास्या नदी रोहितास्या कुण्ड के उत्तर तोरणद्वार से निकलकर नाभिगिरि पहुँचने से दो कोस इधर से ही पश्चिम दिशा को

---

१. त्रिलोकसार, पृ० २९०।
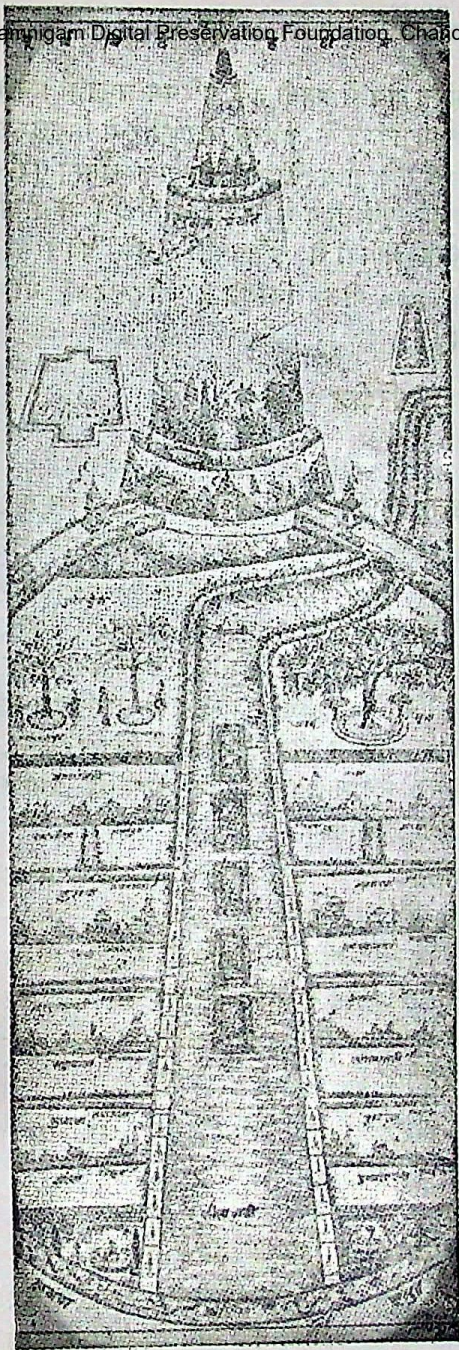
सुमेरु पर्वत की पूर्व दिशा में बहती हुई सीता नदी एवं उसके दोनों तटों पर स्थित विदेह के आठ-आठ देश।

ओर मुड़ जाती है और हैमवत क्षेत्र में बहती हुई पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर जाती है। रोहितनदी रोहितकुण्ड के दक्षिण तोरणद्वार से निकलकर नाभिगिरि की दो कोश से इधर से ही प्रदक्षिणा देते हुए के समान पूर्वाभिमुख होकर आगे बहती हुई पूर्व समुद्र में प्रवेश करती है। ये दोनों नदियाँ २८-२८ हजार परिवार नदियों से सहित हैं। इनके प्रवेश का तोरणद्वार १२५ योजन (५००००० मील) विस्तृत है और १८७½ यो० (७५०००० मील) ऊँचा है।

हरिक्षेत्र

हरित-हरिकांता नदी

महापद्म सरोवर के उत्तर तोरणद्वार से हरिकांता नदी निकल कर १६०५ $\frac{५}{१९}$ यो० प्रमाण (६४२१०५२ $\frac{१२}{१९}$ मील) पर्वत पर आती है पुनः सौ यो० (४००००० मील) पर्वत से दूर ही हरिकांता कुण्ड में गिरती है। तथा हरित नदी निषध पर्वत के तिगिंच्छ सरोवर के दक्षिण तोरणद्वार से निकल कर ७४२१ $\frac{१}{१९}$ यो० (२९६८४२१० $\frac{१०}{१९}$ मील) पर्वत पर आकर सौ योजन (४००००० मील) पर्वत को छोड़कर ही नीचे हरित्कुण्ड में गिरती है। इन दोनों नदियों के उद्गम और प्रवेश के तोरणद्वार, कुण्ड, पर्वत और देवियों के भवनों का प्रमाण तथा नदी की धारा का प्रमाण रोहित नदी से दूना-दूना है, ऐसा समझना।

नाभिगिरि—यहाँ हरिक्षेत्र में १००० यो० (४०००००० मी०) ऊंचा १००० योजन ही विस्तृत श्वेतवर्ण वाला पर्वत है। इसका नाम 'विजयवान् है। इस पर चारण नामक व्यंतरदेव का भवन जिनमंदिर सहित है। पूर्वोक्त दोनों नदियाँ दो कोश दूर से ही इस पर्वत को छोड़ कर प्रदक्षिणा के आकार से बहती हुई अपनी परिवारनदियों के साथ पूर्व-पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर जाती हैं।

विदेह क्षेत्र

सीता-सीतोदा नदी

सीतोदा नदी निषध के तिगिंच्छ सरोवर के उतर तोरण द्वार से निकलकर पर्वत पर ७४२१ $\frac{१}{१९}$ यो० (२९६८४२१० $\frac{१०}{१९}$ मील) तक आकर पर्वत को दो सौ योजन (८००००० मील) छोड़ कर नीचे सीतोदा कुण्ड में गिरी है। सीता नदी भी नील पर्वत के केसरी सरोवर के दक्षिण तोरण-

द्वार से निकल कर ७४२१—$\frac{1}{19}$ योजन (२९६८४२१०$\frac{10}{19}$ मील) तक पर्वत पर बहकर दो सौ योजन (८००००० मील) नीचे पर्वत को छोड़कर सीता-कुँड में नीचे गिरी हैं। ये दोनों नदियां मेरु पर्वत को दो कोश दूर से ही छोड़कर प्रदक्षिणा के आकार होती हुई क्षेत्र में चली जाती हैं। सीता नदी पूर्व विदेह में बहती हुई पूर्व समुद्र में प्रवेश करती है और सीतोदा नदी पश्चिम समुद्र में प्रवेश करती है। सीता-सीतोदा नदियों को परिवार नदियां चौरासी-चौरासी हजार हैं। ये परिवार नदियां देवकुरु-उत्तरकुरु क्षेत्र में ही बहती हैं।

सुमेरु पर्वत

विदेह क्षेत्र के बीचों-बीच में सुमेरु पर्वत है। यह पृथ्वी से ९९००० योजन (३९६०,००००० मील) ऊंचा है। इसकी नींव पृथ्वी के नीचे १००० योजन (४०००००० मील) गहरी है। इसकी चूलिका ४० यो० (१६०००० मील) है। मेरु पर्वत के ऊपर ५०० यो० (२०००००० मील) जाकर नंदन वन है, उसका विस्तार ५०० योजन प्रमाण (२०००००० मील) प्रमाण है। यह नंदनवन मेरु पर्वत के चारों ओर भीतर भाग में अवस्थित है। नंदनवन से ६२५०० योजन (२५००००००० मील) ऊपर जाकर सौमनस-वन है। इसका विस्तार भी चारों तरफ ५०० योजन (२०००००० मील) है। सौमनस वन से ३६००० योजन (१४४०००००० मील) ऊपर जाकर पांडुक वन है। इस पांडुक वन का विस्तार ४९४ योजन है अर्थात् (१९७६००० मील) है।

इस पांडुकवन के ठीक बीच में सुमेरु की चूलिका है। इसका विस्तार मूल में १२ योजन (४८००० मील), मध्य में ८ योजन (३२००० मील) और अग्रभाग में ४ योजन (१६००० मील) मात्र है। यह ४० योजन (१६०००० मील) ऊँची है। यह मेरु पर्वत नींव में १००९०$\frac{10}{11}$ योजन (४०३६३६३६$\frac{4}{11}$) मील चौड़ा है। १००० योजन (४०००००० मील) के बाद अर्थात् पृथ्वी के ऊपर भद्रसाल वन में १०००० योजन (४००००००० मील) चौड़ा है।

यह पर्वत नंदनवन के बाह्य भाग में ९९५३$\frac{6}{11}$ यो० (३९८१८१८१$\frac{9}{11}$ मील) है और अभ्यंतर भाग में ८९५४$\frac{6}{11}$ योजन (३५८१८१८१$\frac{9}{11}$ मील) है। आगे घटते-घटते सौमनस वन में इसका बाह्य विस्तार ४२७२$\frac{8}{11}$ योजन (१७०९०९०९$\frac{1}{11}$ मील) तथा अभ्यंतर भाग में ३१७$\frac{8}{11}$ योजन (१२७०९०९$\frac{1}{11}$ मील) है आगे पांडुक वन में बाह्य विस्तार १००० योजन
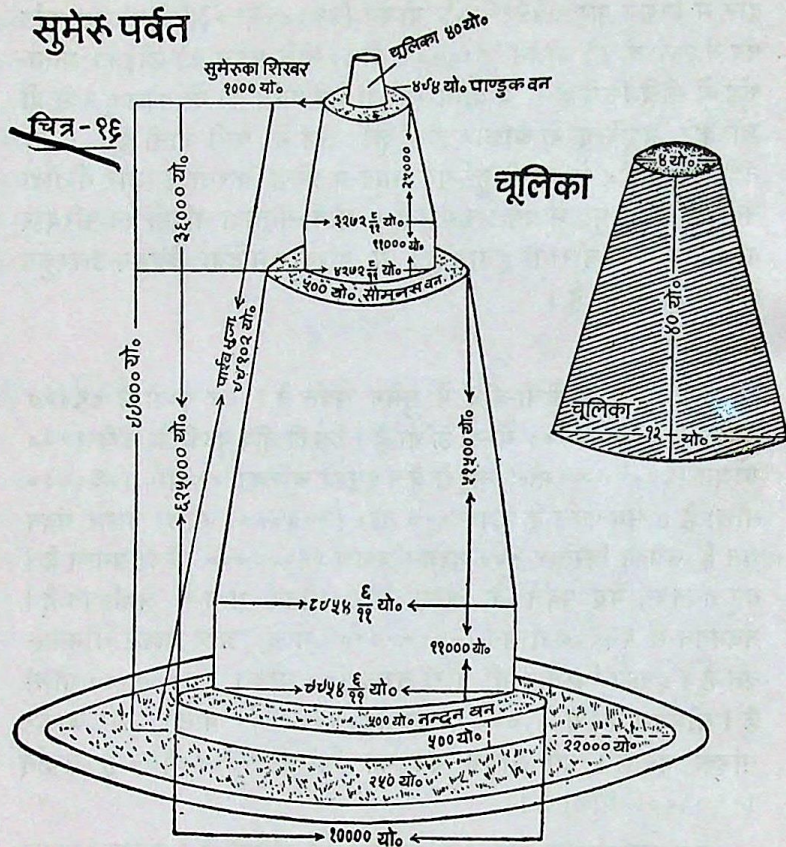
(४०००००० मील) है। अभ्यंतर भाग में १२ योजन (४८००० मील) की चूलिका है वही विस्तार है।

पर्वत के घटने का क्रम—इस पर्वत के विस्तार में मूल से एक प्रदेश से ग्यारह प्रदेशों पर एक प्रदेश की हानि हुई है। इसीप्रकार ग्यारह अंगुल जाने पर एक अंगुल, ग्यारह हाथ जाने पर एक हाथ की एवं ग्यारह योजन जाने पर एक योजन की हानि हुई है। इस पर्वत में नंदन वन और सौमनस की कटनी पाँच-पाँचसौ योजन (२०००००० मील २००००००) मील की हैं अतः नंदनवन के ऊपर और सौमनसवन से ऊपर ११००० योजन (४४०००००० मील) तक समान विस्तार वाला है अर्थात् वहां घटने का क्रम नहीं है। बाकी सर्वत्र उपर्युक्त क्रम से घटा है।

मेरु पर्वत की परिधियाँ—मेरु पर्वत की छह परिधियों में से प्रथम परिधि हरितालमयी, दूसरी वैडूर्यमणि की, तीसरी सर्वरत्नमयी, चौथी वज्रमयी, पांचवी पंचवर्ण और छठी लोहितवर्ण है। मेरु के जो ये परिधि भेद हैं वे भूमि से होते हैं। प्रत्येक परिधि का विस्तार १६५०० योजन (६६०००००० मील) है। सातवीं परिधि वृक्षों से की गई है। सातवीं परिधि के ११ भेद हैं। भद्रसालवन, मानुषोत्तरवन, देवरमण, नागरमण, भूतरमण ये पाँच वन भद्रसालवन में हैं। नंदनवन, उपनंदनवन ये दो वन नंदनवन में हैं। सौमनसवन, उपसौमनसवन ये दो वन सौमनसवन में हैं। पांडुक, उपपांडुकवन ये दो वन पांडुक वन में हैं। ये सब बाह्य भाग से हैं[1]।

मेरु पर्वत का वर्ण—यह पर्वत मूल में (नींव में) १००० यो० (४०००००० मील) तक वज्रमय है। पृथ्वीतल से लेकर ६१००० योजन २४४०००००० मील) तक उत्तम रत्नमय, ऊपर ३८००० योजन (१५२०००००० मील) तक सुवर्णमय है और चूलिका वैडूर्यमणिमय है।

भद्रसाल वन—सुमेरु पर्वत के चारों तरफ पृथ्वी पर भद्रसाल वन हैं। यह पूर्व-पश्चिम में २२००० योजन (८८०००००० मील) है और दक्षिण-उत्तर में २५० योजन (१०००००० मील) चौड़ा है। इस भद्रसाल वन में चारों दिशाओं में चार[2] चैत्यालय हैं। ये चैत्यालय-सौ योजन लंबे, पचास योजन चौड़े और पचहत्तर योजन ऊँचे हैं। इनका वर्णन त्रिलोकसार आदि में बड़ा ही मनोरम है। इन चैत्यालयों में १०८-१०८ जिन प्रतिमायें हैं। जो बहुत ही सुन्दर हैं। भद्रसाल वन के बाह्य-अभ्यंतर दोनों पार्श्व भाग में वेदिका है जो एक योजन (४००० मील) ऊंची अर्ध योजन (२००० मील) चौड़ी है।

नंदन वन—नंदन वन सर्वत्र पांच सौ योजन (२०००००० मील) विस्तृत है। इसकी चारों दिशाओं में भी भद्रसाल वन के चैत्यालय सदृश चार चैत्यालय हैं। नंदन वन में ईशान विदिशा में एक बलभद्र नाम का

---

१. लोकविभाग पृ० ३०।

२. ये चैत्यालय लघु योजन से हैं अतः ८०० मील लंबे ४०० मील चौड़े, और ६०० मील ऊंचे हैं।

३. इस इन्द्र सभा का वर्णन त्रिलोकसार तिलोयपण्णत्ति आदि ग्रंथों में देखिये।

कूट है। यह १०० यो० (४००००० मील) ऊंचा १०० यो० चौड़ा और ऊपर में ५० योजन (२००००० मील) विस्तृत है। नंदन वन में, नंदन, मंदर, निषध, हिमवान्, रजत, रुचक, सागर और वज्र ये आठ कूट हैं। ये सुवर्णमयी, ५०० यो० (२०००००० मील) ऊंचे, ५०० यो० (२०००००० मील) मूल में विस्तृत हैं और २५० यो० (१०००००० मील) ऊपर में विस्तृत है। बलभद्र कूट में बलभद्र नाम का देव और इन[1] कूटों में दिक्कुमारी देवियां रहती हैं।

सौमनस वन—सौमनसवन में भी चारों दिशाओं में चार चैत्यालय हैं वे प्रमाण में नंदन वन[1] से आधे हैं। वहां भी नौ कूट हैं।

---

१. अर्थात् ४०० मील लंबे, २०० मील चौड़े और ३०० मील ऊंचे हैं।

इस वन की पुष्करिणी में इन्द्र सभा की रचना

(ह-पु। ५।३३८-३४०)
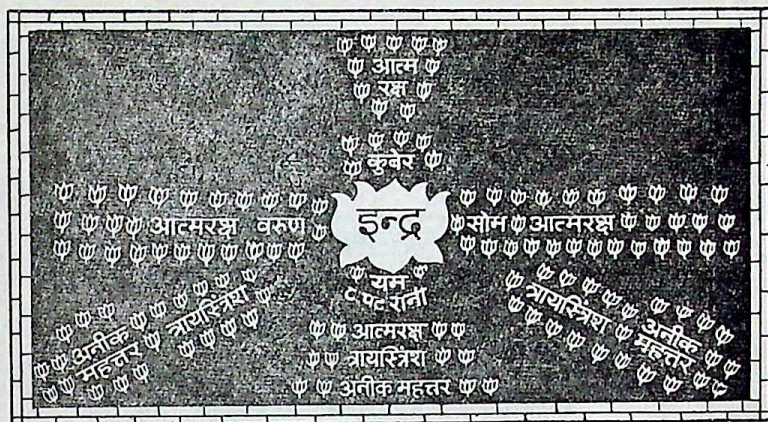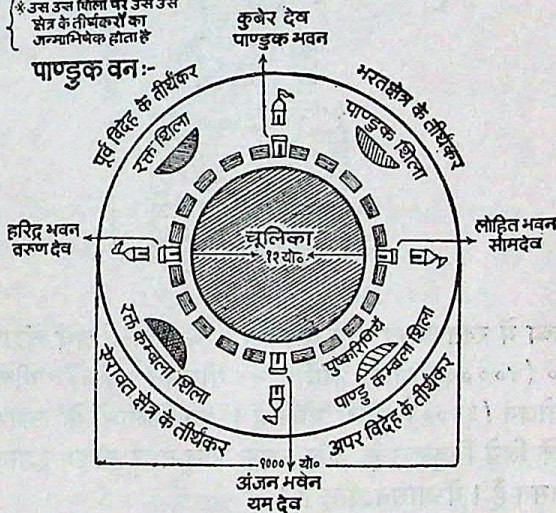
पांडुक वन—पांडुक वन की चारों दिशाओं में चार चैत्यालय हैं जो कि प्रमाण में १०० कोश लंबे, ५० कोश चौड़े और ७५ कोश ऊँचे हैं।[1]

---

१. २०० मी० लंबे, १०० मी० चौड़े और १५० मील ऊँचे हैं ॥

पांडुक शिला—इस वन की चारों विदिशाओं में चार शिलायें हैं। ईशान दिशा में पांडुकशिला, आग्नेय में पांडुकंबला, नैऋत्य में रक्ता
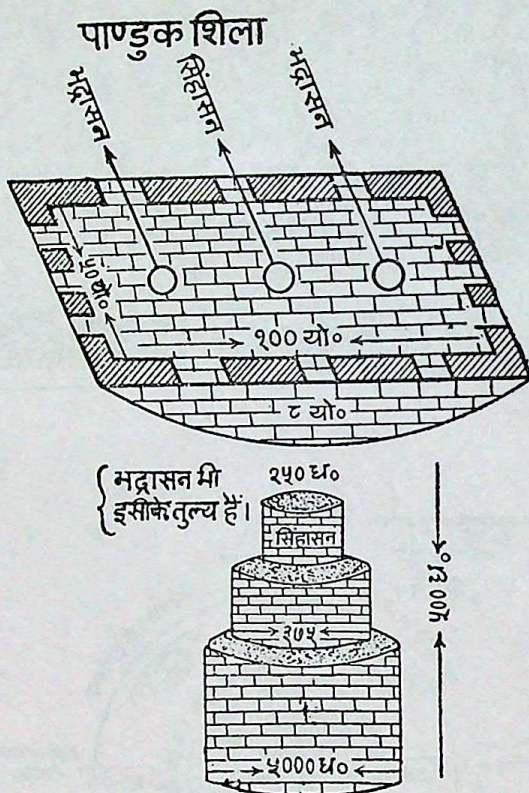
और वायव्य में रक्तकंबला नाम वाली हैं। ये शिलायें अर्ध चंद्राकार हैं। १०० यो० (४००००० मील) लंबी, ५० योजन (२००००० मील) चौड़ी और ८ योजन (३२००० मील) मोटी हैं। इन शिलाओं के ऊपर बीच में तीर्थंकर के लिये सिंहासन है और उसके आजू-बाजू सौधर्म-ईशान इन्द्र के लिये भद्रासन हैं। ये आसन गोल हैं।

पांडुक शिला पर भरत क्षेत्र के तीर्थंकरों का और पांडुकंबला पर पश्चिम विदेह के तीर्थंकरों का, रक्ता शिला पर पूर्व विदेह के तीर्थंकरों का और रक्तकंबला पर ऐरावत लेत्र के तीर्थंकरों का अभिषेक होता है।

विशेष—नंदन और सौमनसवन में सौधर्म इन्द्र के लोकपालों के भवन, अनेकों बावड़ियाँ, सौधर्म इन्द्र की सभा आदि अनेकों वर्णन हैं जो

कि तिलोयपण्णत्ति आदि से ज्ञातव्य है। यहाँ संक्षेप मात्र में दिग्दर्शन कराया गया है।

विदेह क्षेत्र का विस्तार—इस विदेह क्षेत्र का विस्तार ३३६८४$\frac{4}{19}$ योजन, (१३४७३६८४२$\frac{2}{19}$ मील है। इस क्षेत्र के मध्य की लंबाई १००००० योजन (४०००००००० मील) चालीस करोड़ मील है।

गजदंत पर्वत—भद्रसाल वन में मेरु की ईशान दिशा में माल्यवान्, आग्नेय में महासौमनस, नैऋत्य में विद्युत्प्रभ और वायव्य विदिशा में गंधमादन ये चार गजदंत पर्वत हैं। दो पर्वत निषध और मेरु का तथा
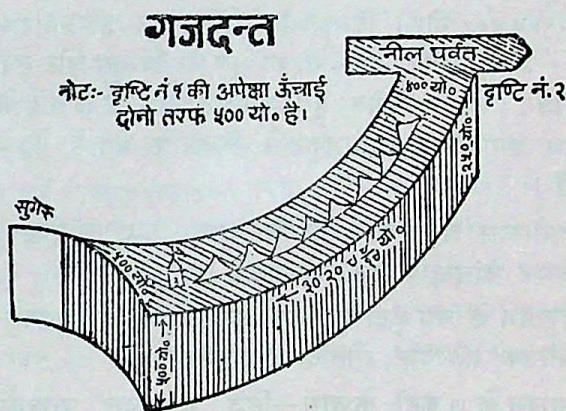
दो पर्वत नील और मेरु का स्पर्श करते हैं। ये पर्वत सर्वत्र ५०० योजन (२०००००० मील) विस्तृत हैं और निषध नील पर्वत के पास ४०० योजन (१६००००० मील) ऊँचे; तथा मेरु के पास ५०० योजन (२०००००० मील) ऊँचे हैं। ये पर्वत ३०२०९$\frac{6}{19}$ यो० (१२०८३७२६३$\frac{3}{19}$ मील) लंबे हैं। सदृश आयत हैं। इन गजदंतों में नील और निषध के पास का अन्तराल ५३००० यो० (२१२०००००० मील) आता है।

माल्यवंत और विद्युत्प्रभ इन दो गजदंतों में सीता-सीतोदा नदी निकलने की गुफा है। सीतानदी नील पर्वत के केसरी सरोवर के उत्तरद्वार से निकल कर पृथ्वी पर सीताकुन्ड में गिर कर आगे बहती हुई जाती है पुनः माल्यवान् पर्वत को गुफा में प्रवेश कर बाहर निकलकर मेरु की प्रदक्षिणा करते हुए पूर्वभाग में चली जाती है। ऐसे ही सीतोदानदी निषध के तिगिंच्छ सरोवर के दक्षिणद्वार से निकलकर विद्युत्प्रभज गदंत

की गुफा में प्रवेश कर बाहर निकल कर मेरु को अर्द्ध प्रदक्षिणा देकर पश्चिम भाग में चली जाती है।

माल्यवान् पर्वत का वर्ण वैडूर्यमणि जैसा है। महासौमनस का रजतमय, विद्युत्प्रभ का तपाये सुवर्णसदृश और गंधमादन का सुवर्ण सदृश है।

माल्यवान् पर्वत के नव कूटों के नाम—सिद्धकूट, माल्यवान्, उत्तर-कौरव, कच्छ, सागर, रजत, पूर्णभद्र, सीता और हरिसह ये नवकूट हैं। सुमेरु के पास का कूट सिद्धकूट है। यह १२५ योजन (५००००० मील) ऊँचा, मूल में १२५ यो० (५०००००मील) विस्तृत और ऊपर ६२$\frac{1}{2}$ योजन (२५०००० मील) विस्तृत है। अंतिम कूट हरिसह १०० योजन (४००००० मील) ऊँचा, १०० योजन मूल में विस्तृत और उपरिमभाग में ५० योजन (२००००० मील) है। शेष कूट पर्वत की ऊँचाई के चौथाई भागप्रमाण यथायोग्य हैं। सिद्धकूट में जिनमंदिर शेष में देव-देवियों के आवास हैं।

महासौमनस पर्वत के ७ कूट के नाम—सिद्ध, सौमनस, देवकुरु, मंगल, विमल, कांचन, वशिष्ट ये ७ कूट हैं।

विद्युत्प्रभ के नव कूटों के नाम—सिद्ध, विद्युत्प्रभ, देवकुरु, पद्म, तपन, स्वस्तिक, शतज्वाल, सीतोदा और हरिकूट।

गंधमादन के ७ कूटों के नाम—सिद्ध, गंधमादन, उत्तरकुरु, गंध-मालिनी, लोहित, स्फटिक और आनंद ये सात कूट हैं।

विशेष—इनमें सिद्धकूटों में जिनमंदिर, शेष में यथायोग्य देव-देवियों के आवास हैं। चारों के सिद्धकूट १२५ यो० (५०००००मील) ऊँचे एवं अंत के कूट १०० यो० (४००००० मील) ऊँचे हैं। शेष अपने-अपने पर्वतों के ऊँचाई के चतुर्थभाग प्रमाण ऊँचे हैं।

बत्तीस विदेह

मेरु की पूर्वदिशा में पूर्वविदेह और पश्चिम दिशा में पश्चिमविदेह है। पूर्व विदेह के बीच में सीता नदी है। पश्चिम विदेह के बीच में सीतोदा नदी है। इन दोनों नदियों के दक्षिण-उत्तर तट होने से चार विभाग हो जाते हैं। इन एक-एक विभाग में आठ-आठ विदेह देश हैं।

पूर्व-पश्चिम में भद्रसाल की वेदी है उसके आगे वक्षार पर्वत उसके आगे विभंगा नदी, उसके आगे वक्षार पर्वत, उसके आगे विभंगा नदी,

उसके आगे वक्षार पर्वत, उसके आगे विभंगा नदी, उसके आगे वक्षार पर्वत, उसके आगे देवारण्य व भूतारण्य की वेदी, ये नव हुए। इन नव के बीच-बीच में आठ विदेहदेश हैं। इसप्रकार सीता-सीतोदा के दक्षिण-उत्तर तट संबंधी बत्तीस विदेह हो जाते हैं।

सोलह वक्षार और बारह विभंगा नदी

सीतानदी के उत्तर तट में भद्रसाल की वेदी से लेकर आगे क्रम से चित्रकूट, पद्मकूट, नलिनकूट और एकशैल ये चार वक्षार पर्वत हैं। गाधवती, द्रहवती, पंकवती ये तीन विभंगा नदियाँ हैं।

सीतानदी के दक्षिण तट में देवारण्य वेदी से लगाकर क्रम से त्रिकूट, वैश्रवण, अंजनात्मा, अंजन, ये वक्षारपर्वत और तप्तजला, मत्तजला, उन्मत्तजला ये तीन विभंगा नदियाँ हैं।

पश्चिम विदेह की सीतोदानदी के दक्षिण तट में भद्रसाल वेदी से लगाकर क्रम से श्रद्धावान् विजटावान्, आशीविष, सुखावह ये चार वक्षार और क्षारोदा, सीतोदा, स्रोतोवाहिनी ये तीन विभंगा नदियाँ हैं।

इसी पश्चिम विदेह की सीतोदानदी के उत्तर तट में देवारण्य की वेदी से लगाकर क्रमसे चंद्रमाल, सूर्यमाल, नागमाल, देवमाल, ये चार वक्षार पर्वत हैं। गंभीरमालिनी, फेनमालिनी, ऊर्मिमालिनी ये तीन विभंगा नदियाँ हैं।

वक्षार पर्वतों का वर्णन—ये वक्षार पर्वत सुवर्णमय हैं। प्रत्येक वक्षार शैलों का विस्तार ५०० यो० (२०००००० मील) है और लंबाई १६५९२-$\frac{2}{19}$ योजन (६६३६८४२१$\frac{1}{19}$ मील) तथा ऊँचाई निषध-नील पर्वत के पास ४०० योजन (१६०००००० मील) एवं सीता-सीतोदा नदी के पास ५०० योजन (२०००००० मील) है। प्रत्येक वक्षार पर चार-चार कूट हैं। नदी के तरफ के कूट सिद्धकूट हैं उन पर जिन चैत्यालय हैं। बचे तीन-तीन कूटों में से एक-एक कूट वक्षार पर्वत के नाम के हैं एवं दो-दो कूट के अपने-अपने वक्षार के पूर्व-पश्चिम पार्श्व के दो विदेह देशों के जो नाम हैं वे ही नाम हैं। यथा—चित्रकूट वक्षार के ऊपर सिद्धकूट, चित्रकूट, कच्छा, सुकच्छा ये चार नाम धारक कूट हैं।

विभंगा नदियों का प्रमाण—ये नदियां निषध-नील पर्वत की तलहटी के पास कुण्ड से निकलती हैं। अपने-अपने कुंड के पास उत्पत्ति स्थान में ५० कोस (५०००० मील) तथा सीता सीतोदा नदियों के पास प्रवेश

स्थान में ५०० कोश (५००००० मील) प्रमाण हैं। इन नदियों की परिवार नदियाँ २८-२८ हजार हैं।

देवारण्यवन—पूर्व-पश्चिम विदेह के अन्त में सीता-सीतोदा दोनों नदी के दक्षिण-उत्तर दोनों तट में चार देवारण्य नाम के वन हैं। अर्थात् विदेह के अन्त में समुद्र के पास देवारण्य नाम के वन हैं।

विदेह के बत्तीस देशों के नाम—सीता नदी के उत्तर तट में भद्रसाल से लगाकर कच्छा, सुकच्छा, महाकच्छा, कच्छकावती, आवर्ता, लांगलावर्ता, पुष्कला, पुष्कलावती ये आठ देश हैं।

सीता नदी के दक्षिण तट में देवारण्य की वेदी से इधर क्रम से वत्सा सुवत्सा, महावत्सा, वत्सकावती, रम्या, सुरम्या, रमणीया, मंगलावती ये आठ देश हैं।

सीतोदा नदी के दक्षिण तट में भद्रसाल वेदी से आगे से क्रम से पद्मा, सुपद्मा, महापद्मा, पद्मकावती, शंखा, नलिनी, कुमुन्द, सरित ये आठ देश हैं।

सीतोदा नदी के उत्तर तट में देवारण्य वेदी से लेकर क्रम से वप्रा, सुवप्रा, महावप्रा वप्रकावती, गंधा, सुगंधा, गंधिला, गंधमालिनी ये आठ देश हैं।

एक-एक देश के छह-छह खंड—ये विदेह देश पूर्वापर २२१२-$\frac{7}{8}$ योजना (८८५१५०० मील) विस्तृत हैं। प्रत्येक क्षेत्र के दक्षिण-उत्तर लम्बाई १६५९२ $\frac{2}{19}$ योजना प्रमाण है। इन विदेह देशों के बहुमध्य भाग में ५० योजन (२००००० मील) और देश के विस्तार समान लम्बा अर्थात् २२१२-$\frac{7}{8}$ योजन (८८५१५०० मील) लम्बा विजयार्ध पर्वत है। इन विजयार्धों में भी दोनों पार्श्व भागों में दो-दो श्रेणियां हैं। अन्तर इतना ही है कि इनमें विद्याधर श्रेणियों में दोनों तरफ ५५-५५ नगरियां हैं। अतः एक-एक विजयार्य सम्बन्धी ११०-११० नगरियां हैं। इन विजयार्धों पर भी नव-नव कूट हैं। और दो-दो महागुफायें हैं जो पूर्वोक्त प्रमाण वाली हैं।

गंगा-सिंधु नदियाँ—सीता-सीतोदा के दक्षिण तट के देशों में दो-दो नदियाँ हैं उनके गंगा-सिंधु नाम हैं। वे नील पर्वत के पास जो कुंड हैं

उनसे निकल कर सीधे दक्षिण दिशा में आती हुई विजयार्ध की गुफा से निकलकर आगे आकर सीता-सीतोदा नदी में मिल जाती हैं। इनके
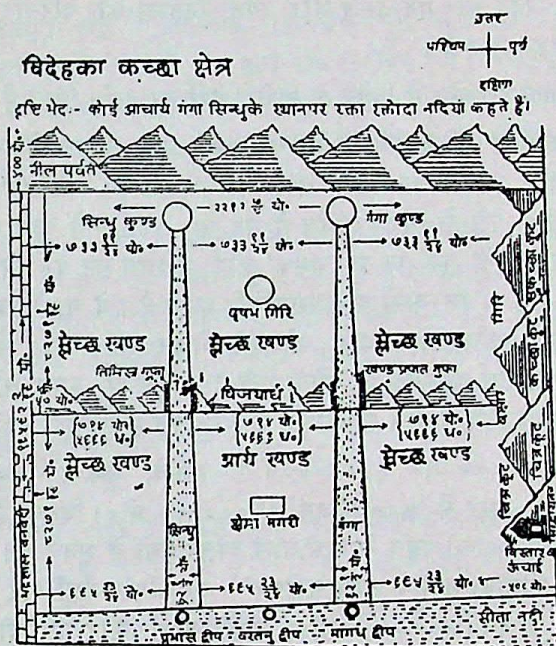
उद्‌गम स्थान में तोरण द्वार ६$\frac{1}{4}$ यो० (२५००० मी०) चौड़ा है और प्रवेश स्थान में तोरण द्वार ६२$\frac{1}{2}$ यो० (२५०००० मी०) चौड़ा है।

रक्ता रक्तोदा नदियाँ—सीता-सीतोदा के उत्तर तट में दो-दो नदियां हैं। उनके नाम रक्ता रक्तोदा हैं। ये नदियां निषध पर्वत के पास के कुंडों से निकल कर उत्तर दिशा में जाती हुई विजयार्ध पर्वत की गुफा में प्रवेश कर आगे निकल कर सीता-सीतोदा नदियों में मिल जाती हैं। इनके भी उद्‌गम-प्रवेश के तोरणद्वार पूर्वोक्त गंगा-सिंधु के समान हैं। प्रत्येक देश में एक विजयार्ध और दो नदियों के निमित्त से छह-छह खंड हो जाते हैं। इनमें एक आर्यखंड और पांच म्लेच्छ खंड कहलाते हैं।

पूर्वोक्त कच्छा आदि विदेह देशों की मुख्य-मुख्य राजधानी, इन आर्यखंडों में हैं। कच्छा आदि देश की राजधानियों के नाम—क्षेमा, क्षेमपुरी, अरिष्टा, अरिष्टपुरी आदि हैं।

इन विदेहदेश के पांच म्लेच्छ खंडों में से मध्य के म्लेच्छ खंड में एक-एक वृषभाचल पर्वत हैं। अतः विदेह के ३२ वृषभाचल पर्वत हो गये हैं। इन पर वहाँ के चक्रवर्ती अपनी-अपनी प्रशस्तियाँ लिखते हैं।

वहाँ विदेह की गंगा-सिंधु और रक्ता-रक्तोदा की परिवार नदियाँ भी १४-१४ हजार हैं।

इस प्रकार संक्षेप में विदेह के बत्तीस भेदों का वर्णन किया है।

यमकगिरि—नील पर्वत से मेरु की तरफ आगे हजार योजन आकर सीता नदी के पूर्व तट पर 'चित्र' और पश्चिम तट पर 'विचित्र' नाम के दो पर्वत हैं। ऐसे ही निषध पर्वत से मेरु की तरफ आगे हजार योजन जाकर सीतोदा के पूर्व तट पर 'यमक' और पश्चिम तट पर 'मेघ' नाम के दो पर्वत हैं। इन चारों को यमकगिरि कहते हैं। ये चारों पर्वत गोल हैं। इन चित्र-विचित्र के मध्य में पाँच सौ योजन (२००००० मी०) का अन्तराल है उस अन्तराल में सीता नदी है। ऐसे ही यमक और मेघ पर्वत के मध्य भाग में पाँच सौ योजन के अन्तराल में सीतोदा नदी है।

ये पर्वत १००० यो० (४०००००० मी०) ऊंचे, मूल में १००० यो० विस्तृत और ऊपर में ५०० योजन (२०००००० मी०) विस्तृत हैं। इन पर्वतों पर अपने-अपने पर्वत के नाम वाले व्यंतर देवों के भवन हैं।

सीता-सीतोदा नदी के बीस सरोवर[1]—यमकगिरि जहाँ पर हैं वहाँ से पाँच सौ योजन (२०००००० मी०) जाकर सीता और सीतोदा नदी में
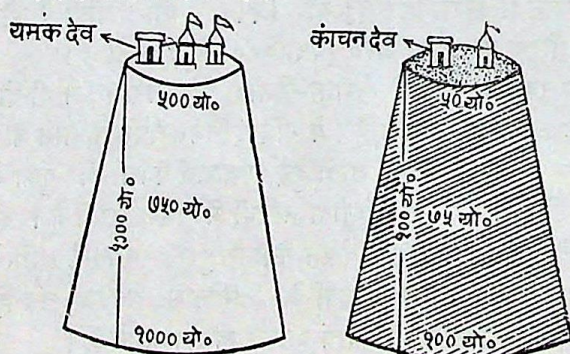
१. त्रिलोकसार में और उत्तर पुराण में बीस सरोवर माने हैं। तिलोयपण्णत्ति में १० माने हैं।

पाँच-पाँच सरोवर हैं अर्थात् देवकुरु-उत्तरकुरु भोगभूमि के दो क्षेत्र हैं और पूर्व-पश्चिम भद्रसाल के दो क्षेत्र हैं। उनमें पाँच-पाँच सरोवर हैं ये सरोवर पाँच सौ-पाँच सौ योजन के अन्तराल से हैं। अर्थात् यमकगिरि के स्थान से पाँच सौ योजन (२०००००० मी०) आगे जाकर मेरु की तरफ सीता-सीतोदा नदी में एक-एक सरोवर हैं पुनः पाँच सौ योजन आगे जाकर एक-एक सरोवर हैं ऐसे पांच-पांच सरोवर हैं। ये देवकुरु-उत्तरकुरु में हैं। इसी प्रकार सीता सीतोदा नदी के भीतर पांच-पांच सरोवर पूर्व-पश्चिम भद्रसाल में हैं। ऐसे ये बीस सरोवर सीता सीतोदा नदी के बीच में हैं।

ये सरोवर नदी की चौड़ाई प्रमाण चौड़े और १००० योजन लम्बे हैं। इनकी चौड़ाई ५०० योजन है। ऐसा तिलोयपण्णत्ति में कहा है। इन सरोवरों की चौड़ाई और लम्बाई नदी के प्रवाह में है। इन सरोवरों में एक-एक मुख्य कमल हैं वे एक-एक योजन विस्तृत हैं। शेष परिवार कमल १४०११५ हैं। सभी सरोवरों में परिवार कमलों की इतनी ही संख्या है। इन कमलों पर नागकुमारी देवियाँ अपने-अपने परिवार सहित रहती हैं।

ये सरोवर नदी के प्रवेश करने और निकलने के द्वार से सहित हैं। नदी के प्रवाह के बीच में इन सरोवरों की तट वेदियाँ बनी हुई हैं।

कांचनगिरि—इन बीस सरोवरों के दोनों तटों पर पंक्तिरूप से पाँच-पाँच कांचनगिरि हैं एक तट सम्बन्धी २०×५=१०० दूसरे तट संबंधी २०×५=१०० ऐसे १००+१००=२०० कांचन गिरि हैं। ये पर्वत १०० यो० (४००००० मी०) ऊँचे, मूल में १०० यो० विस्तृत और ऊपर में ५० योजन (२००००० मी०) विस्तृत हैं। इन पर्वतों के ऊपर अपने-अपने पर्वत के नामवाले देवों के भवन हैं। इनमें रहने वाले देव शुक (तोते के) वर्ण वाले हैं। देवों के भवन के द्वार सरोवरों के सन्मुख हैं, अतः ये पर्वत अपने-अपने सरोवर के सम्मुख कहलाते हैं।

विशेष—सरोवर से आगे २०९२ $\frac{२}{१९}$ (८३६८४२१ $\frac{१}{१९}$ मी०) जाकर नदी के प्रवेश करने के द्वार से सहित दक्षिण भद्रसाल और उत्तर भद्र-साल की वेदिका है। अर्थात् अन्तिम सरोवर और भद्रसाल की वेदी का इतना अंतराल है।

दिग्गज पर्वत—देवकुरु-उत्तरकुरु भोगभूमि में और पूर्व-पश्चिम भद्र-साल में महानदी सीता-सीतोदा हैं। उनके दोनों तटों पर दो-दो दिग्गजेंद्र
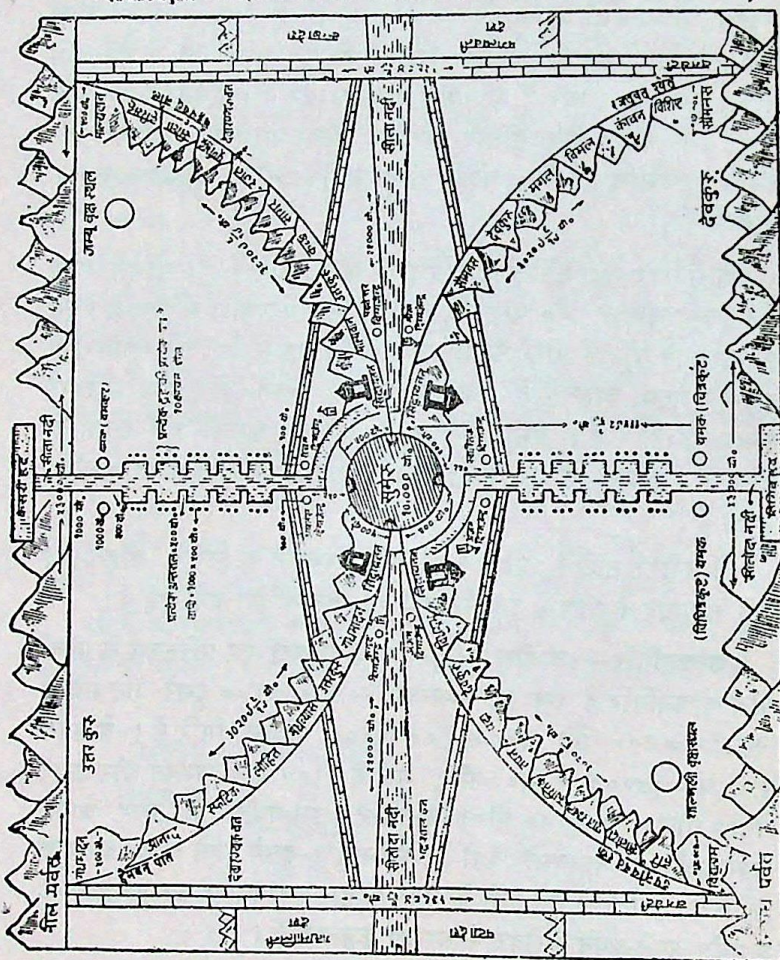
पर्वत हैं। ये पर्वत आठ हैं ये १०० यो० (४००००० मी०) ऊंचे, मूल में १०० यो० विस्तृत और ऊपर भाग में ५० यो० (२००००० मी०) प्रमाण हैं।

इनके नाम—पूर्व भद्रसाल में पद्मोत्तर, नील, देवकुरु में स्वस्तिक, अंजन, पश्चिम भद्रसाल में कुमुद, पलाश, उत्तरकुरु में अवतंस और रोचन ये नाम हैं। इन पर्वतों पर दिग्गजेंद्र देव रहते हैं।

देवकुरु-उत्तरकुरु भोगभूमि—मेरु और निषध पर्वत के मध्य में देवकुरु और मेरु तथा नील पर्वत के मध्य में उत्तरकुरु है। कुरु क्षेत्र का विस्तार ११८४२ $\frac{2}{19}$ यो० (४७३६८४२१ $\frac{1}{19}$ मील) प्रमाण है। कुरुक्षेत्रों का वृत्त विस्तार ७११४३ $\frac{4}{19}$ यो० (२८४५७२८४२ $\frac{2}{19}$ मील) तथा एक कला का नौवां अंश) $\frac{1}{19}$ × ९) है। कुरुक्षेत्र की जीवा ५३००० यो० (२१२०००००० मील) और उसके धनुष का प्रमाण ६०४१८ $\frac{12}{19}$ यो० (२४१६७४५२६ $\frac{6}{19}$ मील) प्रमाण हैं। इसमें उत्तर भोगभूमि की व्यवस्था है।

जंबू वृक्ष—मेरु पर्वत के ईशान कोण में सीता नदी के पूर्व तट पर नीलपर्वत के पास में जंबूवृक्ष का स्थल है। इस स्थल के ऊपर सब ओर आधा योजन (२००० मील) ऊंची $\frac{12}{19}$ यो० (२५० मील) विस्तृत रत्नों से व्याप्त एक वेदिका है। ५०० योजन (२०००००० मील) विस्तार वाले और मध्य में आठ योजन (३२००० मील) तथा अन्त में दो कोस (२००० मील) मोटाई से संयुक्त उस सुवर्णमय उत्तम स्थल के ऊपर मूल में मध्य में, और ऊपर यथा क्रम से १२ यो० (४८००० मील) ८ यो० (३२००० मील) ४ यो० (१६००० मील) विस्तृत तथा ८ योजन (३२००० मील) ऊंची जो पीठिका है उसके बारह पद्मवेदिकायें हैं।

इस पीठिका पर बहु मध्य भाग में जंबूवृक्ष है, यह ८ यो० (३२००० मील) ऊंचा है इसकी वज्रमय जड़ दो कोस (२००० मील) गहरी है। इस वृक्ष का दो कोस (२००० मील) मोटा, दो योजन (८००० मील) मात्र ऊंचा स्कंध है। इस वृक्ष की चारों दिशाओं में चार महाशाखायें हैं। इनमें से प्रत्येक शाखा ६ योजन (२४००० मील) लम्बी है[1] और इतने मात्र अन्तर से सहित है। इनके सिवाय क्षुद्रशाखायें अनेकों हैं। यह वृक्ष पृथ्वीकायिक है जामुन के वृक्ष के समान इसमें फल लटकते हैं अतः यह

---

१. लोक विभाग में प्रथम अध्याय की गाथा १३० में जम्बूवृक्ष की प्रत्येक शाखा को ८ योजन (३२००० मील) लम्बी बतायी है।

जंबूवृक्ष कहलाता है। अर्थात् यह वृक्ष १० योजन[1] (४०००० मील) ऊंचा, मध्य में ६$\frac{1}{4}$ योजन (२५,००० मील) चौड़ा और ऊपर चार योजन (१६०००० मील) चौड़ा है।
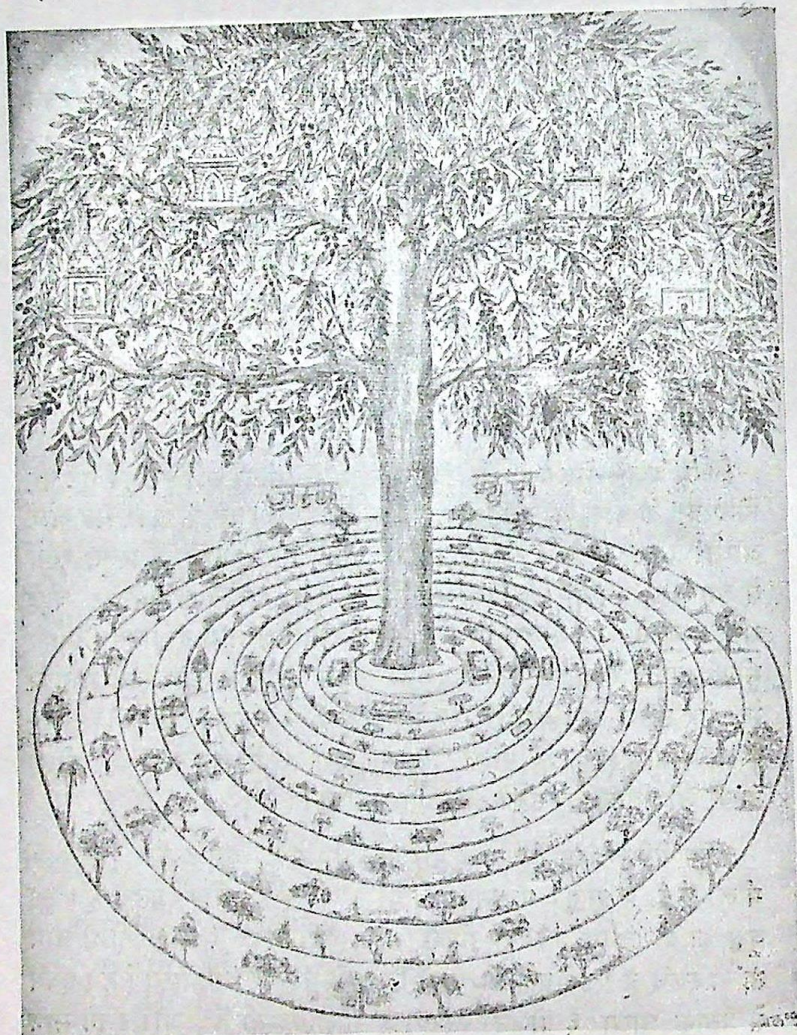
सुमेरु के उत्तर भाग में उत्तरकुरु भोगभूमि है इसमें अर्थात् मेरु की ईशान दिशा में स्थित जंबूवृक्ष और उसकी बारह पद्म वेदिकायें।

---

१. तिलोयपण्णत्ति में पृ० ४१८ में जंबूवृक्ष का वर्णन उत्सेध (लघु) योजन से बताया है।

पूर्व विदेह क्षेत्र

सुमेरु पर्वत

उत्तरकुरु

सीतानदी

मंगलावती

शाखा पर जिन मंदिर—जंबूवृक्ष की उत्तरदिशा संबंधी, नील कुलाचल की तरफ जो शाखा है उस शाखा पर जिनमंदिर है। शेष तीन दिशा की शाखाओं पर आदर-अनादर नामक व्यंतर देवों के भवन हैं। इस मुख्यवृक्ष के चारों तरफ जो बारह पद्म वेदिकायें बताई हैं उनमें प्रत्येक में चार-चार तोरणद्वार हैं। उनमें इस जंबूवृक्ष के परिवार वृक्ष हैं। उनकी संख्या १४०११९ है। इनमें चार देवांगनाओं के चार वृक्ष अधिक हैं। अर्थात् पद्मद्रह के परिवार की संख्या १४०११५ है। यहाँ चार देवांगनायें अधिक हैं। परिवार वृक्षों का प्रमाण मुख्य वृक्ष से आधा-आधा है।

शाल्मलीवृक्ष—इसी प्रकार सीतोदा नदी के पश्चिम तट में निषध कुलाचल के पास मेरु पर्वत से नैऋत्य दिशा में देवकुरु क्षेत्र में रजतमयी स्थल पर शाल्मलिवृक्ष है इसका सारा वर्णन जंबूवृक्ष सदृश है। इसकी दक्षिण शाखा पर जिनमंदिर है शेष तीन शाखाओं पर वेणु और वेणुधारी देवों के भवन हैं। इनके परिवार वृक्ष भी पूर्वोक्त प्रमाण हैं।

विशेष—जितने जंबूवृक्ष और शाल्मलिवृक्ष हैं। प्रत्येक की शाखाओं पर एक-एक जिन मंदिर होने से उतने ही जिन मंदिर हैं।

इस प्रकार से विदेहक्षेत्र के सुमेरु, गजदंत, वक्षारपर्वत, विभंगा नदी, बत्तीसदेश, विजयार्ध, वृषभाचल, गंगा-सिन्धु आदि नदियाँ, यमकगिरि, नदी के मध्य के सरोवर, दिग्गज और जंबू-शाल्मलि वृक्षों का वर्णन किया गया है। जो कि नाममात्र से है।

रम्यक क्षेत्र

नारी नरकांता नदी

इस रम्यक क्षेत्र का सारा वर्णन हरिक्षेत्र के सदृश है। यहाँ पर नील पर्वत के केसरी सरोवर के उत्तर तोरण द्वार से नरकांता नदी निकली है। और रुक्मि पर्वत के महापुण्डरीक सरोवर के दक्षिण तोरणद्वार से नारी नदी निकलती है। ये नदियाँ नारी-नरकांता कुण्ड में गिरती हैं यहाँ के नाभिगिरि का नाम पद्मवान् है इस पर पद्म नाम का व्यंतर देव रहता है।

हैरण्यवत क्षेत्र

सुवर्णकूला-रूप्यकूला नदी

इस हैरण्यवत क्षेत्र का सारा वर्णन हैमवत क्षेत्र के सदृश है। यहाँ पर रुक्मि पर्वत के महापुण्डरीक सरोवर के उत्तर तोरणद्वार से रूप्यकूला

नदी एवं शिखरी पर्वत के पुंडरीक सरोवर के दक्षिण तोरणद्वार से सुवर्णकूला नदी निकलती है। यहाँ पर नाभिगिरि का गंधवान् नाम है उस पर प्रभास नाम का देव रहता है।

ऐरावत क्षेत्र

रक्ता-रक्तोदा नदी

इस ऐरावत क्षेत्र का सारा वर्णन भरत क्षेत्र के सदृश है। इसमें बीच में विजयार्ध पर्वत है। उस पर नव कूट हैं—सिद्धकूट, उत्तरार्धऐरावत, तामिस्रगुह, माणिभद्र, विजयार्धकुमार, पूर्णभद्र, खंडप्रपात, दक्षिणार्ध ऐरावत और वैश्रवण। यहाँ पर शिखरी पर्वत के पुंडरीक सरोवर के पूर्व-पश्चिम तोरणद्वार से रक्ता-रक्तोदा नदियाँ निकलती हैं जो कि विजयार्ध की गुफा से निकल कर पूर्व-पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर जाती हैं। अतः यहाँ पर भी छह खंड हैं। उसमें भी मध्य का आर्य खंड है।

इस प्रकार संक्षेप में सात क्षेत्रों का वर्णन हुआ।

●

जम्बूद्वीप का संक्षिप्त अवलोकन

तीन सौ ग्यारह पर्वत कहां हैं

सुमेरु पर्वत विदेह के मध्य में है। छह कुलाचल-सात क्षेत्रों की सीमा करते हैं। चार गजदंत मेरु की विदिशा में हैं। सोलह वक्षारविदेह क्षेत्र में हैं। बत्तीस विजयार्ध बत्तीस विदेह देश में हैं और दो विजयार्ध, भरत और ऐरावत में एक-एक हैं अतः चौंतीस विजयार्ध हैं। बत्तीस विदेह के बत्तीस, भरत ऐरावत के दो ऐसे चौंतीस वृषभाचल हैं। हैमवत, हरि तथा रम्यक और हैरण्यवत में एक-एक नाभिगिरि ऐसे चार नाभिगिरि हैं। सीता नदी के पूर्व-पश्चिम तट पर एक-एक ऐसे चार यमकगिरि हैं। देवकुरु-उत्तरकुरु में दो-दो तथा पूर्व पश्चिम भद्रसाल में दो-दो ऐसे आठ दिग्गज पर्वत हैं। सीता-सीतोदा के बीच बीस सरोवरों में प्रत्येक सरोवर के दोनों तटों पर पांच-पांच होने के दो सौ कांचनगिरि हैं।

जंबूद्वीप की संपूर्ण नदियां कितनी हैं और कहां-कहां हैं ?

भरत क्षेत्र की गंगा-सिन्धु २+इनकी सहायक नदियां २८००० हैमवत क्षेत्र की रोहित-रोहितास्या २+इनकी सहायक नदियां ५६०००+हरि-क्षेत्र की हरित्-हरिकांता २+इनकी सहायक ११२०००+विदेह क्षेत्र की सीता-सीतोदा २+इनकी सहायक १६८००० (८४०००×२)+विभंगा नदी १२+इनकी सहायक ३३६००० (२८०००×१२) बत्तीस विदेह देशों की गंगा सिन्धु और रक्ता-रक्तोदा नाम की ६४+इनकी सहायक नदियां ८९६०००(१४०००×६४)। रम्यकक्षेत्र की नारी नरकांता २+इनकी सहायक नदियां ११२०००+हैरण्यवत क्षेत्र की सुवर्णकूला रूप्यकूला २+इनकी सहायक ५६०००+ऐरावत क्षेत्र की रक्ता-रक्तोदा २+इनकी सहायक २८००० = १७९२०९०।

अर्थात् सम्पूर्ण जम्बूद्वीप में सत्रह लाख, बानवे हजार, नब्बे नदियां हैं। इनमें विदेह की नदियां चौदह लाख, अठत्तर हैं। सीता सीतोदा की जो परिवार नदियां हैं वे देवकुरु-उत्तरकुरु में ही बहती हैं। आगे पूर्व-विदेह-पश्चिम विदेह में विभंगा, तथा गंगा सिन्धु और रक्ता-रक्तोदा

हैं। जितनी परिवार नदियां हैं वे सभी अपने-अपने कुण्डों से उत्पन्न होती हैं।

चौंतीस कर्मभूमि

भरत क्षेत्र के आर्य खंड की एक कर्मभूमि, वैसे ही ऐरावत क्षेत्र के आर्यखंड की एक कर्मभूमि तथा बत्तीस विदेहों के आर्यखंड की ३२ कर्मभूमि ऐसे चौंतीस कर्मभूमि हैं। इनमें से भरत-ऐरावत में षट्काल परिवर्तन होने से ये दो अशाश्वत कर्मभूमि हैं एवं विदेहों में सदा ही कर्मभूमि व्यवस्था होने से वे शाश्वत कर्मभूमि हैं।

छह भोगभूमि

हैमवत और हैरण्यवत में जघन्य कर्मभूमि की व्यवस्था है। वहाँ पर मनुष्यों को शरीर की ऊँचाई एक कोस है, एक पल्य आयु है और युगल ही जन्म लेते हैं युगल ही मरते हैं। दस प्रकार के कल्पवृक्षोंसे भोग सामग्री प्राप्त करते हैं।

हरिवर्ष क्षेत्र और रम्यक क्षेत्र में मध्यम भोगभूमि की व्यवस्था है। वहाँ पर दो कोस ऊँचे, दो पल्य आयु वाले मनुष्य होते हैं। ये भी भोग-सामग्री को कल्पवृक्षों से प्राप्त करते हैं।

देवकुरु-उत्तरकुरु क्षेत्र में उत्तम भोगभूमि की व्यवस्था है। यहाँ पर तीन कोस ऊँचे, तीन पल्य की आयु वाले मनुष्य होते हैं। ये छहों भोग-भूमियां शाश्वत हैं यहाँ पर परिवर्तन कभी नहीं होता है।

जंबूवृक्ष-शाल्मलिवृक्ष

उत्तरकुरु में ईशान दिशा में जम्बूवृक्ष एवं देवकुरु में नैऋत्य दिशा में शाल्मलिवृक्ष हैं।

चौंतीस आर्यखंड

एक भरत में, एक ऐरावत में और बत्तीस विदेहदेशों में बत्तीस ऐसे आर्यखंड चौंतीस हैं।

पांच सौ सत्तर म्लेच्छ खंड

भरत क्षेत्र के पाँच, ऐरावत के पाँच और बत्तीस विदेह के प्रत्येक के पांच-पांच ५ + ५ + (३२ × ५) = १७० म्लेच्छ खंड हैं।

वेदी और वनखंड

जम्बूद्वीप में ३११ पर्वत हैं उनके आजूबाजू या चारों तरफ मणिमयी वेदियां हैं और वनखंड हैं।

नब्बे कुंड प्रमुख हैं—गंगादि १४ नदियां जहाँ गिरती हैं वहाँ के १४, विभंगा नदियों की उत्पत्ति के १२, विदेह की गंगादि—रक्तादि ६४ नदियों की उत्पत्ति के ६४ ऐसे १४+१२+६४=९० कुंड हैं। इनके चारों तरफ उतनी ही वेदी और वनखंड हैं।

२६ सरोवर हैं—कुलाचल के ६+सीता-सीतोदा के २०=२६। इनके चारों तरफ वेदी हैं और चारों तरफ ही वनखंड हैं। जितनी नदियां हैं उनके दोनों पार्श्व भागों में अर्थात् १७९२०९०×२=३५८४१८० मणिमयी वेदिका हैं और उतने ही वनखंड हैं।

इन वेदियों की ऊँचाई आधा योजन और विस्तार पांच सौ धनुष प्रमाण है। सर्वत्र वनखंड आधा योजन चौड़े हैं।

जंबूद्वीप के अठत्तर जिन चैत्यालय

सुमेरु के चार वन सम्बन्धी १६+छह कुलाचल के ६+चार गजदंत के ४+सोलह वक्षार के १६+चौंतीस विजयार्ध के ३४+जंबू शाल्मलि-वृक्ष के २=७८। ये जंबूद्वीप के अठत्तर चैत्यालय हैं। इनमें प्रत्येक में १०८-१०८ जिन प्रतिमायें विराजमान हैं उनको मेरा मन वचन काय से नमस्कार होवे।

इस जंबूद्वीप में हम कहां हैं ?

यह भरतक्षेत्र, जंबूद्वीप के १९०वें भाग (५२६ $\frac{६}{१९}$) योजन प्रमाण है। इसके छह खंड में जो आर्यखंड है उसका प्रमाण लगभग निम्न-प्रकार है।

दक्षिण का भरत क्षेत्र २३८ $\frac{३}{१९}$ योजन का है। पद्मसरोवर की लम्बाई १००० योजन है तथा गंगा सिन्धु नदियां ५-५ सौ योजन पर्वत पर पूर्व-पश्चिम बह कर दक्षिण में मुड़ती हैं। यह आर्यखंड उत्तर-दक्षिण २३८ योजन चौड़ा है। पूर्व पश्चिम में १०००+५००+५००=२००० योजन लम्बा है। इनको आपस में गुणा करने से २३८×२०००= ४७६००० योजन प्रमाण आर्यखंड का क्षेत्रफल हो जाता है। इसके मील

बनाने से ४७६००० × ४००० = १९०४०००००० (एक सौ नब्बे करोड़ चालीस लाख) मील प्रमाण क्षेत्रफल हो जाता है।

इस आर्य खंड के मध्य में अयोध्या नगरी है। इस अयोध्या के दक्षिण में ११९ योजन की दूरी पर लवण समुद्र की वेदी है और उत्तर की तरफ इतनी ही दूर पर विजयार्ध पर्वत की वेदिका है। अयोध्या से पूर्व में १००० योजन की दूरी पर गंगानदी की तटवेदी है अर्थात् आर्यखंड की दक्षिण दिशा में लवण समुद्र, उत्तर दिशा में विजयार्ध, पूर्व दिशा में गंगा नदी एवं पश्चिम दिशा में सिन्धु नदी हैं ये चारों आर्य खंड की सीमारूप हैं।

अयोध्या से दक्षिण में ४७६००० मील (चार लाख छहत्तर हजार) मील जाने से लवण समुद्र है और उत्तर में ४,७६,००० मील जाने से विजयार्ध पर्वत है। उसी प्रकार अयोध्या से पूर्व में ४०००००० (चालीस लाख) मील दूर पर गंगानदी तथा पश्चिम में इतनी ही दूर पर सिन्धु-नदी है।

आज का सारा विश्व इस आर्यखंड में है। हम और आप सभी इस आर्यखंड में ही भारतवर्ष में रहते हैं।

षट्काल परिवर्तन

काल के दो भेद हैं अवसर्पिणी और उत्सपिणी। अवसर्पिणी के छह भेद हैं। सुषमासुषमा, सुषमा, सुषुमादुषमा, दुषमा, सुषमा, दुषमा और दुषमा दुषमा। प्रथम काल चार कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है, द्वितीय काल तीन कोड़ाकोडी सागर, तृतीय काल दो कोड़ाकोड़ी सागर, चतुर्थ काल व्यालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागर, पंचम काल इक्कीस हजार वर्ष का एवं छठा काल इक्कीस हजार वर्ष प्रमाण है।

ऐसे उत्सर्पिणी के दुषुमा दुषुमा से लेकर छह भेद हैं। उनमें छठे से पहले तक परिवर्तन चलता है। अवसर्पिणी में आयु शरीर की ऊँचाई आदि का ह्रास होता है और उत्सर्पिणी में आयु, शरीर की ऊंचाई सुख आदि की वृद्धि होती जाती है।

जब पहले इस भरत क्षेत्र के आर्य खंड में सुषमासुषमा काल चल रहा था, तब वहाँ के मनुष्यों के शरीर की ऊंचाई तीन कोस की थी और आयु तीन पल्य की थी, वे स्वर्ण सदृशवर्ण के थे। वे तीन दिन बाद कल्पवृक्षों से प्राप्त बदरीफल बराबर उत्तम भोजन ग्रहण करते थे उनके मल-मूत्र पसीना, रोग अपमृत्यु आदि बाधायें नहीं थीं। वहाँ की स्त्रियां

आयु के नव महीने शेष रहने पर गर्भ धारण करती थीं और युगल-पुत्र पुत्री को जन्म देती थीं। सन्तान के जन्म होते ही पुरुष को जंभाई और स्त्री को छींक आने से वे मर जाते थे। ये युगल वृद्धि को प्राप्त होकर कल्पवृक्षों से उत्तम सुख का अनुभव करते रहते थे।

दस प्रकार के कल्पवृक्ष—पानांग, तूर्यांग, भूषणांग, माल्यांग, ज्योतिरांग, दीपांग, गृहांग, भोजनांग, पात्रांग और वस्त्रांग। ये उत्तम वृक्ष अपने नाम के अनुसार ही उत्तम वस्तुयें मांगने पर देते हैं। इसे उत्तम भोगभूमि कहते हैं। धीरे-धीरे आयु आदि घटते-घटते प्रथम काल समाप्त होकर दूसराकाल प्रवेश करता है। तब मनुष्यों की आयु दो पल्य, शरीर की ऊंचाई दो कोस और शरीर का वर्ण चन्द्रमा के समान रहता है। ये लोग दो दिन बाद कल्पवृक्षों से प्राप्त हुए बहेड़े के बराबर भोजन को ग्रहण करते हैं। इसे मध्यम भोगभूमि कहते हैं। द्वितीय काल पूर्ण हो जाने के बाद तृतीय काल प्रवेश करता है तब यहाँ के मनुष्यों की आयु एक पल्य, ऊंचाई एक कोस और शरीर का वर्ण हरित रहता है। ये एक दिन के अन्तर से आंवले के बराबर भोजन ग्रहण करते हैं। आगे क्रम से आयु आदि घटती जाती है। इस प्रकार यह जघन्य भोगभूमि का काल चल रहा था।

जब तृतीय काल में पल्य का आठवां भाग शेष रह गया तब ज्योतिरांग कल्पवृक्षों का प्रकाश मंद पड़ने से आकाश में सतत् घूमने वाले सूर्य चंद्र दिखने लगे। उस समय प्रजा के डरने से 'प्रतिश्रुति' नाम के प्रथम कुलकर ने उनको वास्तविक स्थिति बताकर उनका डर दूर किया। ऐसे ही क्रम से तेरह कुलकर और हुए। अन्तिम कुलकर महाराज नाभिराज थे। उनकी पत्नी मरुदेवी युगलिया जन्म न लेकर किसी प्रधान कुल की कन्या थीं। उन दोनों का व्याह इंद्रों ने बड़े उत्सव से कराया था।

पुनः चतुर्थ काल में जब चौरासी लाख पूर्व वर्ष, तीन वर्ष साढ़े आठ माह काल बाकी था, तब अन्तिम कुलकर नाभिराज की रानी मरुदेवी के गर्भ में भगवान् वृषभ देव आए और नव महीने बाद जन्म लिया। ये प्रथम तीर्थंकर थे। इनकी आयु चौरासी लाख वर्ष पूर्व की थी। इन्होंने कल्पवृक्ष के नष्ट हो जाने के बाद प्रजा को असि, मषि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प और विद्या इन षट्क्रियाओं से आजीविका करना बतलाया। क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ये तीन वर्ण स्थापित किये। भगवान् ने विदेह क्षेत्र की स्थिति को अपने अवधिज्ञान से जानकर यह सब व्यवस्था बनाई।

भगवान की आज्ञा से इंद्र ने कौशल, काशी, आदि देश, अयोध्या, हस्तिनापुर, उज्जयिनी आदि नगरियों की रचना की। इस काल में मनुष्यों की उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि और शरीर पाँच सौ धनुष का ऊँचा होता था।

भगवान ने अपनी पुत्रियों को ब्राह्मी लिपि और अंक लिपि सिखाई। पुत्र पुत्रियों को सम्पूर्ण विद्याओं में निष्णात किया। अनन्तर दीक्षा लेकर मोक्ष मार्ग को प्रगट किया। पुनः केवलज्ञान होने के बाद साक्षात् संपूर्ण जगत को जान लिया और अन्त में चतुर्थकाल के तीन वर्ष, आठ माह और एक पक्ष शेष रहने पर वे कैलाश पर्वत से मोक्ष चले गये।

अनन्तर क्रम से तेईस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नव बलभद्र, नव नारायण, नव प्रतिनारायण, त्रेसठ शलाका महापुरुष हुए हैं। प्रथम चक्रवर्ती भरत महाराज थे। अन्तिम तीर्थंकर भगवान महावीर ने वृषभदेव के समान केवलज्ञान प्राप्त होने के बाद असंख्य भव्य जीवों को धर्मोपदेश दिया है। ये महावीर स्वामी भी पंचम काल के तीन वर्ष आठ माह एक पक्ष शेष रहने पर कार्तिक कृष्ण अमावस्या के उषा काल में पावापुरी से मोक्ष गये हैं।

उसके बाद दुषमा नामक पंचम काल आ गया। इसमें मनुष्यों की उत्कृष्ट आयु १२० वर्ष और शरीर की ऊँचाई अधिक से अधिक सात हाथ की थी। दिन पर दिन आयु आदि घट रहे हैं। महावीर स्वामी को हुये अब तक लगभग ढाई हजार वर्ष व्यतीत हो गये हैं। हम लोग इस पंचम काल के मनुष्य हैं। छह वर्ष पूर्व भगवान महावीर के पच्चीस सौवें निर्वाण महोत्सव को विशेषरूप से मना चुके हैं।

आगे साढ़े अठारह हजार वर्ष तक महावीर का शासन चलता रहेगा अनन्तर एक राजा दिगंबरमुनि से प्रथम ग्रास को शुल्करूप में माँगेगा तब मुनि अन्तराय करके जाकर आर्यिका, श्रावक, श्राविकारूप चतुर्विध संघ सहित सल्लेखना ग्रहण कर मर कर स्वर्ग जायेंगे। उस समय धरणेन्द्र कुपित हो राजा को मार देगा। तब राजा नरक जायेगा। बस ! धर्म का और राजा का अंत हो जायेगा।

अनंतर छठा काल आयेगा उस समय मनुष्यों का शरीर एक हाथ का, आयु सोलह वर्ष की मात्र रह जायेगी। ये मनुष्य पशुवृत्ति करेंगे। मांसाहारी होंगे, जंगलों में घूमेंगे, दुःखी, दरिद्री, रोगी, कुटुंबहीन होंगे। पुनः उनचास दिन के प्रलय के बाद इक्कीस हजार वर्ष व्यतीत हो

जानेपर यह छठा काल समाप्त होगा। और देव-विद्याधरों द्वारा रक्षा किये गये कुछ मनुष्य जीवित रह कर पुनः सृष्टि की परम्परा बढ़ायेंगे।

उत्सर्पिणी के छठे काल के बाद धीरे-धीरे पंचम आदि काल आते रहेंगे। यह काल परिवर्तन परम्परा अनादि है। जैनधर्म अनादि है यह सार्वधर्म है—सभी जीवों का हित करने वाला है। सभी तीर्थंकर इस धर्म का उपदेश देते हैं वे स्वयं इस धर्म के प्रवर्तक नहीं हैं। ऐसे अनंतों तीर्थंकर हो चुके हैं और भविष्य में होते रहेंगे। कोई भी जीव अपने आप धर्म पुरुषार्थ के बल से अपने आपको तीर्थंकर भगवान बना सकता है, ऐसा समझना।

यह षट्काल परिवर्तन भरत, ऐरावत के आर्य खंडों में ही होता है अन्यत्र नहीं है।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः, केवलज्ञानभास्कराः।
कुर्वंतु जगतां शांतिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः॥

●

लवण समुद्र का वर्णन

लवणसमुद्र जंबूद्वीप को चारों ओर से घेरे हुए खाई के सदृश गोल है इसका विस्तार दो लाख योजन प्रमाण है। एक नाव के ऊपर अधोमुखी दूसरी नाव के रखने से जैसा आकार होता है उसी प्रकार वह समुद्र चारों ओर आकाश में मण्डलाकार से स्थित है। उस समुद्र का विस्तार ऊपर दस हजार योजन और चित्रापृथ्वी के समभाग में दो लाख योजन है। समुद्र के नीचे दोनों तटों में से प्रत्येक तट से पंचानवे हजार योजन प्रवेश करने पर दोनों ओर से एक हजार योजन की गहराई में तल विस्तार दस हजार योजन मात्र है।

समभूमि से आकाश में इसकी जल शिखा है यह अमावस्या के दिन समभूमि से ११००० योजन प्रमाण ऊँची रहती है। वह शुक्ल पक्ष में प्रतिदिन क्रमशः वृद्धि को प्राप्त होकर पूर्णिमा के दिन १६००० योजन प्रमाण ऊँची हो जाती है। इस प्रकार जल के विस्तार में १६००० योजन की ऊँचाई पर दोनों ओर समान रूप से १९०००० योजन की हानि हो गई है। यहाँ प्रतियोजन की ऊँचाई पर होने वाली वृद्धि का प्रमाण ११,७/८ योजन प्रमाण है।

गहराई की अपेक्षा रत्नवेदिका से ९५ प्रदेश आगे जाकर एक प्रदेश की गहराई है ऐसे ९५ अंगुल जाकर एक अंगुल, ९५ हाथ जाकर एक हाथ, ९५ कोस जाकर एक कोस एवं ९५ योजन जाकर एक योजन की गहराई हो गई है। इसी प्रकार से ९५ हजार योजन जाकर १००० योजन की गहराई हो गई है। अर्थात् लवण समुद्र के समजल भाग से समुद्र का जल एक योजन नीचे जाने पर एक तरफ से विस्तार में ९५ योजन हानिरूप हुआ है। इसी क्रम से एक प्रदेश नीचे जाकर ९५ प्रदेशों की, एक अंगुल नीचे जाकर ९५ अंगुलों की, एक हाथ नीचे जाकर ९५ हाथों की भी हानि समझ लेना चाहिए।

अमावस्या के दिन उक्त जल शिखा की ऊँचाई ११००० योजन होती पूर्णिमा के दिन वह उससे ५००० योजन बढ़ जाती है। अतः ५००० के १५ में भाग प्रमाण क्रमशः प्रतिदिन ऊँचाई में वृद्धि होती है।

१६०००-११०००/१५ = ५०००/१५, ५०००/१५ = ३३३, १/३ योजन-तीन सो तैंतीस से कुछ अधिक प्रमाण प्रतिदिन वृद्धि होती है।

समुद्र के मध्य में पाताल

लवण समुद्र के मध्य भाग में चारों ओर उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य ऐसे १०८ पाताल हैं। ज्येष्ठ पाताल ४, मध्यम ४ और जघन्य १००० हैं। उत्कृष्ट पाताल चार दिशाओं में चार हैं, मध्यम पाताल ४ विदिशाओं में ४ एवं उत्कृष्ट मध्यम के मध्य में ८ अन्तर दिशाओं में १००० जघन्य पाताल हैं।

४ उत्कृष्ट पाताल

उस समुद्र के मध्य भाग में पूर्वादि दिशाओं के क्रम से पाताल, कदम्बक, वड़वामुख और यूपकेसर नामक चार पाताल हैं। इन पातालों का विस्तार मूल में और मुख में १०००० योजन प्रमाण है इनकी गहराई ऊँचाई और मध्यविस्तार मूल विस्तार से दस गुणा—१००००० योजन प्रमाण है। पातालों की वज्रमय भित्तिका ५०० योजन मोटी है। ये पाताल जिनेन्द्र भगवान द्वारा अरंजन-घट विशेष के समान कहे गये हैं। पाताल के उपरिम त्रिभाग में सदा जल रहता है, उनके मूल के त्रिभाग में घनीवायु और मध्य त्रिभाग में क्रम से जल, वायु दोनों रहते हैं। सभी पातालों के पवन सर्वकाल शुक्ल पक्षों में स्वभाव से बढ़ते हैं एवं कृष्ण पक्ष में स्वभाव से घटते हैं। शुक्ल पक्ष में पूर्णिमा तक प्रतिदिन २२२२,२/९ योजन पवन की वृद्धि हुआ करती है। पूर्णिमा के दिन पातालों के अपने-अपने तीन भागों में से नीचे के दो भागों में वायु और ऊपर के तृतीय भाग में केवल जल रहता है। अमावस्या के दिन अपने-अपने तीन भागों में से क्रमशः ऊपर के दो भागों में जल और नीचे के तीसरे भाग में केवल वायु स्थित रहता है। पातालों के अन्त में अपने अपने मुख विस्तार को ५ से गुणा करने पर जो प्राप्त हो, उतने प्रमाण आकाश में अपने-अपने पार्श्व भागों में जलकण जाते हैं। "तत्त्वार्थ-राजवार्तिक" ग्रंथ में जलवृद्धि का कारण किन्नरियों का नृत्य बतलाया है। यथा—"रत्नप्रभाखरपृथ्वी-भागसन्निवेशिभवनालयवातकुमारतद्व-निताक्रीडाजनितानिलसंक्षोभकृतपातलोन्मीलननिमीलनहेतुकौ वायुतोय-निष्क्रमप्रवेशौ भवतः। तत्कृता दशयोजनसहस्रविस्तारमुखजलस्योपरि पंचाशद्योजनावधृता जलवृद्धिः। तत उभयत आरत्नवेदिकायाः सर्वत्र द्विगव्यूतिप्रमाणा जलवृद्धिः। पातालोन्मीलन-वेगोपशमेन हानिः।

अर्थ—रत्नप्रभा पृथ्वी के खरभाग में रहने वाली वातकुमार देवियों की क्रीडा से क्षुब्ध वायु के कारण ५०० योजन जल की वृद्धि होती है

अर्थात् वायु और जल का निष्क्रम और प्रवेश होता है। और दोनों तरफ रत्नवेदिका पर्यंत सर्वत्र दो गव्यूति प्रमाण जलवृद्धि होती है। पाताल के उन्मीलन के वेग की शांति से जल की हानि होती है। इन पातालों का तीसरा भाग १०००००/३ = ३३३३३१/३ योजन प्रमाण है।

ज्येष्ठ पाताल सीमंत बिल के उपरिम भाग से संलग्न हैं। अर्थात् ये पाताल भी मृदंग के आकार गोल है, समभूमि से नीचे की गहराई का जो प्रमाण है वह इन पातालों को ऊँचाई है। यदि प्रश्न यह होवे को एक लाख योजन तक इनकी गहराई समतल से नीचे कैसे होगी ? तो उसका समाधान यह है कि रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अस्सो हजार योजन मोटी है, वहाँ खरभाग, पंकभाग पर्यन्त ये पाताल पहुँचे हुए ऊँचे गहरे हैं।

४ मध्यम पाताल

विदिशाओं में भी इनके समान चार पाताल हैं उनका मुख विस्तार और मूल विस्तार १००० योजन तथा मध्य में और ऊँचाई गहराई में १०००० योजन है, इनकी वज्रमय भित्ति ५० योजन प्रमाण है। इन पातालों के उपरिम तृतीय भाग में जल, नीचे के तृतीय भाग में वायु, मध्य के तृतीय भाग में जल, वायु दोनों रहते हैं। पातालों की गहराई-ऊँचाई १०००० योजन है १०००० /३ = ३३३३,१/३ पातालों की तृतीय भाग तीन हजार तीस सौ तैंतीस से कुछ अधिक है। इनमें प्रतिदिन होने वाली जलवायु की हानि वृद्धि का प्रमाण २२२,२/९ योजन प्रमाण है।

१००० जघन्य पाताल

उत्तम, मध्यम पातालों के मध्य में आठ अन्तर दिशाओं में एक हजार जघन्य पाताल हैं। इनके विस्तार आदि का प्रमाण मध्यम पातालों की अपेक्षा दसवें भाग मात्र है अर्थात् मुख और मूल में ये पाताल १०० योजन हैं। मध्य में चौड़े और गहरे १००० हजार योजन प्रमाण हैं। इनमें भो उपरिम त्रिभाग में जल, नीचे में वायु और मध्य में जलवायु दोनों हैं। इनका त्रिभाग ३३३,१/३ योजन है और प्रतिदिन जलवायु की हानि-वृद्धि २२,२/९ योजन मात्र है।

नागकुमार देवों के १४२,००० नगर

लवणसमुद्र के बाह्य भाग में ७२००० हजार, शिखर पर २८००० और अभ्यन्तर भाग में ४२००० नगर अवस्थित हैं। समुद्र के

अभ्यन्तर भाग की वेला की रक्षा करने वाले वेलंधर नागकुमार देवों के नगर ४२००० हैं। जलशिखा को धारण करने वाले नागकुमार देवों के २८००० नगर हैं एवं समुद्र के बाह्य भाग की रक्षा करने वाले नाग-कुमार देवों के ७२००० नगर हैं।

ये नगर दोनों तटों से ७०० योजन जाकर तथा शिविर से ७००,१/२ योजन जाकर आकाश तल में स्थित हैं। इनका विस्तार १०००० योजन प्रमाण है। नगरियों के तट उत्तम रत्नों से निर्मित समान गोल हैं। प्रत्येक नगरियों में ध्वजाओं, तोरणों से सहित दिव्य तट वेदियाँ हैं। उन नगरियों में उत्तम वैभव से सहित वेलंधर और भुजग देवों के प्रासाद स्थित हैं। जिनमंदिरों से रमणीय, वापी उपवनों से सहित इन नगरियों का वर्णन बहुत ही सुन्दर है ये नगरियाँ अनादि-निधन हैं।

उत्कृष्ट पाताल के आसपास के ८ पर्वत

समुद्र के दोनों किनारों में ब्यालीस हजार योजन प्रमाण प्रवेश करके पातालों के पार्श्व भागों में आठ पर्वत हैं। (ऊपर) तट से ४२००० योजन आगे समुद्र में जाकर "पाताल" के पश्चिम दिशा में कौस्तुभ और पूर्व दिशा में कौस्तुभास नाम के दो पर्वत हैं। ये दोनों पर्वत रजतमय, धवल, १००० योजन ऊँचे, अर्धघट के समान आकार वाले वज्रमय मूल भाग से सहित, नाना रत्नमय अग्रभाग से सुशोभित हैं। प्रत्येक पर्वत का तिरछा विस्तार एक लाख सोलह हजार योजन है। इस प्रकार से जगती से पर्वतों तक तथा पर्वतों का विस्तार मिलाकर दो लाख योजन होता है। पर्वत का विस्तार ११६०००। जगती से पर्वत का अंतराल ४२००० + ४२००० = ८४०००। ११६००० + ८४००० = २०००००।

ये पर्वत मध्य में रजतमय हैं इनके ऊपर इन्हीं के नाम वाले कौस्तुभ-कौस्तुभास देव रहते हैं। इनकी आयु, अवगाहना आदि विजयदेव के समान हैं। कदंबपाताल की उत्तर दिशा में उदक नामक पर्वत और दक्षिण दिशा में उदकाभास नामक पर्वत हैं। ये दोनों पर्वत नीलमणि जैसे वर्ण वाले हैं। इन पर्वतों के ऊपर क्रम से शिव और शिवदेव निवास करते हैं। इनकी आयु आदि कौस्तुभदेव के समान है।

बड़वामुख पाताल की पूर्व दिशा में शंख और पश्चिम दिशा में महाशंख नामक पर्वत हैं। ये दोनों ही शंख के समान वर्ण वाले हैं। इन पर उदक, उदकावास देव स्थित हैं, इनका वर्णन पूर्वोक्त सदृश है। यूपकेसरी के दक्षिण भाग में दक नामक पर्वत और उत्तरभाग में दकवास

नामक पर्वत हैं। ये दोनों पर्वत वैडूर्यमणिमय हैं। इनके ऊपर क्रम से लोहित, लोहितांक देव रहते हैं।

८ सूर्य द्वीप हैं

जंबूद्वीप की जगती से ब्यालीस हजार योजन जाकर "सूर्यद्वीप" नाम से प्रसिद्ध आठ द्वीप हैं। ये द्वीप पूर्व में कहे हुए कौस्तुभ आदि पर्वतों के दोनों पार्श्वभागों में स्थित होकर निकले हुए मणिमय दीपकों से युक्त शोभायमान हैं। त्रिलोकसार में १६ "चन्द्रद्वीप" भी माने गये हैं। यथा-अभ्यन्तर तट और बाह्य तट दोनों से ४२००० योजन छोड़कर चारों विदिशाओं के दोनों पार्श्वभागों में दो-दो, ऐसे आठ "सूर्यद्वीप" हैं। और दिशा-विदिशा के बीच में जो आठ अन्तरदिशायें हैं उनके दोनों पार्श्वभागों में दो-दो, ऐसे १६ "चन्द्रद्वीप" नामक द्वीप हैं। ये सब द्वीप ४२००० योजन व्यास वाले और गोल आकार वाले हैं। यहाँ द्वीप से "टापू" को समझना।

समुद्र में गौतम द्वीप का वर्णन

लवण समुद्र के अभ्यन्तर तट से १२००० योजन आगे जाकर १२००० योजन ऊंचा एवं इतने ही प्रमाण व्यास वाला, गोलाकार, गौतम नामक द्वीप है जो कि समुद्र में "वायव्य" विदिशा में है। ये उपर्युक्त सभी द्वीप वन, उपवन, वेदिकाओं से रम्य हैं और "जिनमंदिर" से सहित हैं। उन द्वीपों के स्वामी वैलंधर जाति के नागकुमार देव हैं। वे अपने-अपने द्वीप के समान नाम के धारक हैं।

मागधद्वीप आदि का वर्णन

भरत क्षेत्र के पास समुद्र के दक्षिण तट से संख्यात योजन जाकर आगे मागध, वरतनु और प्रभास नाम के तीन द्वीप हैं। अर्थात् गंगा नदी के तोरणद्वार से आगे कितने ही योजन प्रमाण समुद्र में जाने पर "मागध" द्वीप है। जंबूद्वीप के दक्षिण वैजयंत द्वार से कितने ही योजन समुद्र में जाने पर "वरतनु" द्वीप हैं। एवं सिंधु नदी के तोरण से कितने ही योजन जाकर "प्रभास" द्वीप है। इन द्वीपों में इन्हीं नाम के देव रहते हैं। इन देवों को भरतक्षेत्र के चक्रवर्ती वश करते हैं।

ऐसे ही ऐरावत क्षेत्र के उत्तर भाग में रक्तोदा नदी के पार्श्व भाग में समुद्र के अन्दर "मागध" द्वीप, अपराजित द्वार से आगे, "वरतनु" द्वीप एवं रक्तानदी के आगे कुछ दूर जाकर "प्रभास" द्वीप है जो कि ऐरावत क्षेत्र के चक्रवर्तियों के द्वारा जीते जाते हैं।

४८ कुमानुषद्वीप

लवणसमुद्र में कुमानुषों के ४८ द्वीप हैं। इनमें से २४ द्वीप तो अभ्यन्तरभाग में एवं २४ द्वीप बाह्यभाग में स्थित हैं। जंबूद्वीप की जगती से ५००० योजन आगे जाकर ४ द्वीप चारों दिशाओं में और इतने ही योजन जाकर चार द्वीप चारों विदिशाओं में हैं। जंबूद्वीप की जगती से ५५० योजन आगे जाकर दिशा, विदिशा की अन्तर दिशाओं में ८ द्वीप हैं। हिमवन्, विजयार्ध पर्वत के दोनों किनारों में जगती से ६००० योजन जाकर ४ द्वीप एवं उत्तर में शिखरी और विजयार्ध के दोनों पार्श्व भागों से ६०० योजन अन्तर समुद्र में जाकर ४ द्वीप हैं।

दिशागत द्वीप १०० योजन प्रमाण विस्तार वाले हैं ऐसे ही विदिशागत द्वीप ५५ योजन विस्तृत, अन्तरदिशागत द्वीप ५० योजन विस्तृत एवं पर्वत के पार्श्वगत द्वीप २५ योजन विस्तृत हैं।

ये सब उत्तम द्वीप वनखंड, तालाबों से रमणीय, फलफूलों के भार से संयुक्त तथा मधुर रस एवं जल से परिपूर्ण हैं। यहाँ कुभोग भूमि की व्यवस्था है। यहाँ पर जन्म लेने वाले मनुष्य "कुमानुष" कहलाते हैं और विकृत आकार वाले होते हैं। पूर्वादिक दिशाओं में स्थित चार द्वीपों के कुमानुष क्रम से एक जंघा वाले, पूँछ वाले, सींग वाले और गूंगे होते हैं। आग्नेय आदि विदिशाओं के कुमानुष क्रमशः शष्कुलीकर्ण, कर्ण प्रावरण, लम्बकर्ण और शशकर्ण होते हैं। अन्तर दिशाओं में स्थित आठ द्वीपों के वे कुमानुष क्रम से सिंह, अश्व, श्वान, महिष, वराह, शार्दूल, घूक और बंदर के समान मुख वाले होते हैं। हिमवान् पर्वत के पूर्व-पश्चिम किनारों में क्रम से मत्स्यमुख, कालमुख तथा दक्षिण विजयार्ध के किनारों में मेषमुख, गोमुख कुमानुष होते हैं। शिखरीपर्वत के पूर्व पश्चिम किनारों पर क्रम से मेघमुख विद्युन्मुख तथा उत्तर विजयार्ध के किनारों पर आदर्शमुख, हस्तिमुख कुमानुष होते हैं। इन सब में से एकोरुक कुमानुष गुफाओं में रहते हैं और मिष्ट मिट्टी को खाते हैं। शेष कुमानुष वृक्षों के नीचे रहकर फलफूलों से जीवन व्यतीत करते हैं।

इस प्रकार से दिशागत द्वीप ४, विदिशागत ४, अन्तर दिशागत ८, पर्वत तटगत ८। ४ + ४ + ८ + ८ = २४ अंतर्द्वीप हुए हैं, ऐसे ही लवणसमुद्र के बाह्यभाग के भी २४ द्वीप मिलकर २४ + २४ = ४८ अन्तर्द्वीप लवण समुद्र में हैं।

कुभोगभूमि में जन्म लेने के कारण

मिथ्यात्व में रत, मन्दकषायी, मिथ्यादेवों की भक्ति में तत्पर, विषम पंचाग्नि तप तपने वाले, सम्यक्त्व रत्न से रहित जीव मरकर कुमानुष होते हैं। जो लोग तीव्र अभिमान से गर्वित होकर सम्यक्त्व और तप से युक्त साधुओं का किंचित् अपमान करते हैं, जो दिगंबर साधु की निंदा करते हैं, ऋद्धि रस आदि गौरव से युक्त होकर दोषों की आलोचना गुरु के पास नहीं करते हैं, गुरुओं के साथ स्वाध्याय वंदना कर्म नहीं करते हैं, जो मुनि एकाकी विचरण करते हैं, क्रोध कलह से सहित हैं, अरहंत गुरु आदि की भक्ति से रहित, चर्तुविध संघ में वात्सल्य से रहित, मौन बिना भोजन करने वाले हैं, जो पाप में संलग्न हैं वे मृत्यु को प्राप्त होकर विषम परिपाक वाले, पाप कर्मों के फल से इन द्वीपों में कुत्सित रूप से युक्त कुमानुष उत्पन्न होते हैं। त्रिलोकसार में भी यह कहा है—

दुब्भावअसूचिसूदकपुप्फवई-जाइसंकरादीहिं।
कयदाणा वि कुवत्ते जीवा कुणरेसु जायंते ॥९२४॥

अर्थ—खोटे भाव से सहित, अपवित्र, मृतादि के सूतक पातक से सहित रजस्वला स्त्री के संसर्ग से सहित, जातिसंकर आदि दोषों से दूषित मनुष्य जो दान करते हैं और जो कुपात्रों में दान देते हैं ये जीव कुमानुष में उत्पन्न होते हैं, क्योंकि ये जीव मिथ्यात्व और पाप से रहित किंचित् पुण्य उपार्जन करते हैं। अतः कुत्सित भोगभूमि में जन्म लेते हैं। इनकी आयु एक पल्य प्रमाण रहती है। एक कोस ऊंचे शरीर वाले हैं। युगलियाँ होते हैं। मरकर नियम से भवनत्रिक देवों में जन्म लेते हैं। कदाचित् सम्यक्त्व को प्राप्त करके ये कुमानुष सौधर्म युगल में जन्म लेते हैं।

लवणसमुद्र के दोनों ओर तट हैं। लवणसमुद्र में ही पाताल है अन्य समुद्रों में नहीं हैं। लवणसमुद्र के जल की गहराई और ऊंचाई में हीनाधिकता है अन्य समुद्रों के जल में नहीं है। सभी समुद्रों के जल की गहराई सर्वत्र हजार योजन है और ऊपर में जल समतल प्रमाण है। लवणसमुद्र का जल खारा है। लवणसमुद्र में जलचर जीव पाये जाते हैं लवणसमुद्र के मत्स्य नदी के गिरने के स्थान पर ९ योजन अवगाहना वाले एवं मध्य में १८ योजन प्रमाण हैं। इसमें कछुआ, शिशमार, मगर आदि जलजंतु भरे हैं।

पद्मपुराण में रावण की लंका को लवणसमुद्र में माना है अतः इस समुद्र में और भी अनेकों द्वीप हैं जैसा कि पद्मपुराण से स्पष्ट है। यथा—

अस्त्यत्र लवणांभोधौ क्रूरग्राहसमाकुलैः।
प्रख्यातो राक्षसद्वीपः प्रभूताद्भुतसंकुलः ॥१०६॥

शतानिसप्त..............१०७ से ११० तक पद्म पु०, ४८ पर्व।

अर्थ—दुष्ट मगर-मच्छों से भरे हुए इस लवणसमुद्र में अनेक आश्चर्य-कारी स्थानों से युक्त प्रसिद्ध "राक्षसद्वीप" है। जो सब ओर सात योजन विस्तृत है तथा कुछ अधिक इक्कीस योजन उसकी परिधि है। उसके बीच में सुमेरु पर्वत के समान त्रिकूट नाम का पर्वत है जो नौ योजन ऊंचा और ५० योजन चौड़ा है, सुवर्ण तथा नाना प्रकार की मणियों से दैदीप्यमान एवं शिलाओं के समूह से व्याप्त है। राक्षसों के इन्द्र भीम ने मेघवाहन के लिए वह दिया था। तट पर उत्पन्न हुए नाना प्रकार के चित्र-विचित्र वृक्षों से सुशोभित उस त्रिकूटाचल के शिखर पर लंका नाम की नगरी है जो मणि और रत्नों की किरणों तथा स्वर्ण के विमानों के समान मनोहर महलों से एवं क्रीड़ा आदि के योग्य सुन्दर प्रदेशों से अत्यंत शोभायमान है। जो सब ओर से तीस योजन चौड़ी है तथा बहुत बड़े प्राकार और परिखा से युक्त होने के कारण दूसरी पृथ्वी के समान जान पड़ती है।

लंका के समीप में और भी ऐसे स्वाभाविक प्रदेश हैं जो रत्न, मणि तथा सुवर्ण से निर्मित हैं। वे सब प्रदेश उत्तमोत्तम नगरों से युक्त हैं राक्षसों की क्रीड़ाभूमि हैं तथा महाभोगों से युक्त विद्याधरों से सहित हैं। संध्याकार सुबेल, कांचन, ह्लादन, योधन, हंस, हरिसागर और अर्धस्वर्ग आदि अन्य द्वीप भी वहां विद्यमान हैं जो समस्त ऋद्धियों तथा भोगों को देने वाले हैं। वन-उपवन आदि से विभूषित हैं तथा स्वर्ण प्रदेशों के समान जान पड़ते हैं।

छठे पर्व में ६२ से ८२ तक वर्णन है—

इस लवणसमुद्र में बहुत से द्वीप हैं जहां कल्पवृक्षों के समान आकार वाले वृक्षों से दिशायें व्याप्त हो रही हैं। इन द्वीपों में अनेकों पर्वत हैं जो रत्नों से व्याप्त ऊंचे-ऊंचे शिखरों से सुशोभित हैं। राक्षसों के इन्द्र भीम, अतिभीम तथा उनके सिवाय अन्य देवों के द्वारा आपके वंशजों के लिए ये सब द्वीप और पर्वत दिये गये हैं ऐसा पूर्वपरंपरा से सुनने में आता है। उन द्वीपों में अनेक नगर हैं। उन नगरों के नाम-संध्याकार,

मनोह्लाद, सुबेल, कांचन, हरियोधन, जलधिध्वान, हंसद्वीप, भरक्षम, अर्धस्वर्गोत्कट, आवर्त, विघट, रोधन, अमल, कान्त, स्फुटतट, रत्नद्वीप, तोयावली, सर, अलंघन, नभोभानु और क्षेम इत्यादि सुन्दर-सुन्दर हैं।

यहाँ वायव्य दिशा में समुद्र के बीच तीन सौ योजन विस्तार वाला बड़ा भारी वानरद्वीप है। उसमें महा मनोहर हजारों अवांतर द्वीप हैं। उस वानर द्वीप के मध्य में रत्न सुवर्ण की लम्बी, चौड़ी शिलाओं से सुशोभित "किष्कु" नाम का बड़ा भारी पर्वत है। जैसे यह त्रिकूटाचल है वैसे ही वह किष्कु पर्वत है इत्यादि। इस प्रकरण से ज्ञात होता है कि इस समुद्र में और भी अनेक द्वीप विद्यमान हैं।

लवणसमुद्र की जगति ८ योजन ऊँची, मूल में १२ योजन, मध्य में ८ एवं ऊपर में ४ योजन प्रमाण विस्तार वाली है। इसके ऊपर वेदिका, वनखण्ड, देवनगर आदि का पूरा वर्णन जम्बूद्वीप की जगती के समान है। इस जगती के अभ्यन्तर भाग में शिलापट्ट और बाह्यभाग में वन हैं। इस जगती की बाह्यपरिधि का प्रमाण १५८११३९ योजन प्रमाण है। यदि जम्बूद्वीप प्रमाण १-१ लाख के खण्ड किये जावें तो इस लवण समुद्र के जम्बूद्वीप प्रमाण २४ खंड हो जाते हैं।

●

भूभ्रमण खण्डन

कोई आधुनिक विद्वान् कहते हैं कि जैनियों की मान्यता के अनुसार यह पृथ्वी वलयाकार चपटी गोल नहीं है। किन्तु यह पृथ्वी गेंद या नारंगी के समान गोल आकार की है। यह भूमि स्थिर भी नहीं है। हमेशा ही ऊपर नीचे घूमती रहती है। तथा सूर्य, चन्द्र, शनि, शुक्र आदि ग्रह, अश्विनी, भरिणी आदि नक्षत्रचक्र, मेरु के चारों तरफ प्रदक्षिणारूप अवस्थित हैं, घूमते नहीं हैं। यह पृथ्वी एक विशेष वायु के निमित्त से ही घूमती है। इस पृथ्वी के घूमने से ही सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि का उदय, अस्त आदि व्यवहार बन जाता है इत्यादि।

दूसरे कोई वादी पृथ्वी का हमेशा अधोगमन ही मानते हैं एवं कोई-कोई आधुनिक पण्डित अपनी बुद्धि में यों मान बैठे हैं कि पृथ्वी दिन पर दिन सूर्य के निकट होती चली जा रही है। इसके विरुद्ध कोई-कोई विद्वान् प्रतिदिन पृथ्वी को सूर्य से दूरतम होती हुई मान रहे हैं। इसी प्रकार कोई-कोई परिपूर्ण जलभाग से पृथ्वी को उदित हुई मानते हैं।

किन्तु उक्त कल्पनायें प्रमाणों द्वारा सिद्ध नहीं होती हैं। थोड़े ही दिनों में परस्पर एक दूसरे का विरोध करने वाले विद्वान् खड़े हो जाते हैं और पहले-पहले के विद्वान् या ज्योतिष यन्त्र के प्रयोग भी युक्तियों द्वारा बिगाड़ दिये जाते हैं। इस प्रकार छोटे-छोटे परिवर्तन तो दिन रात होते ही रहते हैं।

इसका उत्तर जैनाचार्य इस प्रकार देते हैं—

भूगोल का वायु के द्वारा भ्रमण मानने पर तो समुद्र, नदी, सरोवर आदि के जल की जो स्थिति देखी जाती है उसमें विरोध आता है।

जैसे की पाषाण के गोले को घूमता हुआ मानने पर अधिक जल ठहर नहीं सकता है। अतः भू अचला ही है। भ्रमण नहीं करती है। पृथ्वी तो सतत घूमती रहे और समुद्र आदि का जल सर्वथा जहाँ का तहाँ स्थिर रहे, यह बन नहीं सकता। अर्थात् गंगा नदी जैसे हरिद्वार से कलकत्ता की ओर वहती है, पृथ्वी के गोल होने पर उल्टी भी बह जायेगी समुद्र और कुओं के जल गिर पड़ेंगे। घूमती हुई वस्तु पर मोटा अधिक जल नहीं ठहर कर गिरेगा ही गिरेगा।

दूसरी बात यह है कि पृथ्वी स्वयं भारी है। अधःपतन स्वभाव वाले बहुत से जल, बालू, रेत आदि पदार्थ हैं जिनके ऊपर रहने से नारंगी के समान गोल पृथ्वी हमेशा घूमती रहे और यह सब ऊपर ठहरे रहें, पर्वत, समुद्र, शहर, महल आदि जहाँ के तहाँ बने रहें यह बात असम्भव है।

यहाँ पुनः कोई भूभ्रमणवादी कहते हैं कि घूमती हुई इस गोल पृथ्वी पर समुद्र आदि के जल को रोके रहने वाली एक वायु है जिसके निमित्त से समुद्र आदि ये सब जहाँ के तहाँ ही स्थिर बने रहते हैं।

इस पर जैनाचार्यों का उत्तर-जो प्रेरक वायु इस पृथ्वी को सर्वदा घुमा रही है, वह वायु इन समुद्र आदि को रोकने वाली वायु का घात नहीं कर देगी क्या ? वह वलवान् प्रेरक वायु तो इस धारक वायु को घुमाकर कहीं की कहीं फेंक देगी। सर्वत्र ही देखा जाता है कि यदि आकाश में मेघ छाये हैं और हवा जोरों से चलती है तब उस मेघ को धारण करने वाली वायु को विध्वंस करके मेघ को तितर-वितर कर देती है, ये बेचारे मेघ नष्ट हो जाते हैं, या देशांतर में प्रयाण कर जाते हैं।

उसी प्रकार अपने बलवान् वेग से हमेशा भूगोल को सब तरफ से घुमाती हुई जो प्रेरक वायु है, वह वहाँ पर स्थिर हुए समुद्र, सरोवर आदि को धारने वाली वायु नष्ट भ्रष्ट कर ही देगी। अतः बलवान् प्रेरक वायु भूगोल को हमेशा घुमाती रहे और जल आदि की धारक वायु वहां बनी रहे, यह नितान्त असंभव है।

पुनः भूभ्रमणवादी कहते हैं कि पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है। अतएव सभी भारी पदार्थ भूमि के अभिमुख होकर ही गिरते हैं। यदि भूगोल पर से जल गिरेगा तो भी वह पृथ्वी की ओर ही गिरकर वहां का वहां ही ठहरा रहेगा। अतः वह समुद्र आदि अपने-अपने स्थान पर ही स्थिर रहेंगे।

इस पर जैनाचार्य कहते हैं कि—आपका कथन ठीक नहीं है। भारी पदार्थों का तो नीचे की ओर गिरना ही दृष्टिगोचर हो रहा है। अर्थात् पृथ्वी में एक हाथ का लम्बा चौड़ा गड्ढा करके उस मिट्टी को गड्ढे की एक ओर ढलाऊ ऊँची कर दीजिये। उस पर गेंद रख दीजिये, वह गेंद नीचे की ओर गड्ढे में ढुकल जायेगी। जबकि ऊपर भाग में मिट्टी अधिक है तो विशेष आकर्षण शक्ति के होने से गेंद को ऊपर देश में ही चिपकी रहना चाहिये था, परन्तु ऐसा नहीं होता है। अतः कहना पड़ता

है कि भले ही पृथ्वी में आकर्षण शक्ति होवे, किन्तु उस आकर्षण शक्ति की सामर्थ्य से समुद्र के जलादिकों का घूमती हुई पृथ्वी से तिरछा या दूसरी ओर गिरना नहीं रुक सकता है।

जैसे कि प्रत्यक्ष में नदी, नहर आदि का जल ढलाऊ पृथ्वी की ओर ही यत्र-तत्र किधर भी बहता हुआ देखा जाता है और लोहे के गोलक, फल आदि पदार्थ स्वस्थान से च्युत होने पर गिरने पर नीचे की ओर ही गिरते हैं।

इस प्रकार जो लोग आर्यभट्ट या इटली, यूरोप आदि देशों के वासी विद्वानों की पुस्तकों के अनुसार पृथ्वी का भ्रमण स्वीकार करते हैं। और उदाहरण देते हैं कि—जैसे अपरिचित स्थान में नौका में बैठा हुआ कोई व्यक्ति नदी पार कर रहा है। उसे नौका तो स्थिर लग रही है और तीर-वर्ती वृक्ष मकान आदि चलते हुए दिख रहे हैं। परन्तु यह भ्रम मात्र है, तद्वत् पृथ्वी की स्थिरता की कल्पना भी भ्रममात्र है।

इस पर जैनाचार्य कहते हैं कि—साधारण मनुष्य को भी थोड़ा सा ही घूम लेने पर आंखों में घूमनी आने लगती हैं, कभी-कभी खंड देश में अत्यल्प भूकम्प आने पर भी शरीर में कँपकँपी, मस्तक में भ्रांति होने लग जाती है। तो यदि डाक गाड़ी के वेग से भी अधिक वेगरूप पृथ्वी की चाल मानी जायेगी, तो ऐसी दशा में मस्तक, शरीर पुराने ग्रह, कूपजल आदि की क्या व्यवस्था होगी।

बुद्धिमान् स्वयं इस बात पर विचार कर सकते हैं।

●

जम्बूद्वीप के चार्ट

जंबूद्वीप के पर्वत और क्षेत्र

चार्ट (क)

पर्वत और क्षेत्रों के नाम	विस्तार (दक्षिण-उत्तर)	(जघन्य) लम्बाई पूर्व पश्चिम	लम्बाई (उत्कृष्ट)	ऊँचाई
क्षेत्र—भरत क्षेत्र	५२६ $\frac{6}{19}$	×	१४४८१ $\frac{5}{19}$	
पर्वत—हिमवान्	१०५२ $\frac{12}{19}$	१४४७१ $\frac{5}{19}$	२४९३१ $\frac{18}{19}$	१००
क्षेत्र—हैमवत	२१०५ $\frac{5}{19}$	२४९३१ $\frac{18}{19}$	३७६७४ $\frac{16}{19}$	
पर्वत—महाहिमवान	४२१० $\frac{10}{19}$	३७६७४ $\frac{16}{19}$	५३२३१ $\frac{6}{19}$	२००
क्षेत्र—हरि	८४२१ $\frac{1}{19}$	५३९३१ $\frac{6}{19}$	७३९०१ $\frac{17}{19}$	
पर्वत—निषध	१६८४२ $\frac{2}{19}$	७३९०१ $\frac{17}{19}$	९४१५६ $\frac{2}{19}$	४००
क्षेत्र—विदेह	३३६८४ $\frac{4}{19}$	९४१५६ $\frac{0}{19}$	मध्य में उत्कृष्ट-१००००० यो.	
पर्वत—नील	१६८४२ $\frac{2}{19}$	७३९०१ $\frac{17}{19}$	९४१५६ $\frac{2}{19}$	४००
क्षेत्र—रम्यक	८४२१ $\frac{1}{19}$	५३९३१ $\frac{6}{19}$	७२९०१ $\frac{17}{19}$	
पर्वत—रुक्मि	४२१० $\frac{10}{19}$	३७६७४ $\frac{16}{19}$	५३९३१ $\frac{6}{19}$	२००
क्षेत्र—हैरण्यतवत	२१०५ $\frac{5}{19}$	२४९३१ $\frac{18}{19}$	३७६७४ $\frac{16}{19}$	
पर्वत—शिखरी	१०५२ $\frac{12}{19}$	१४४७१ $\frac{5}{19}$	२४९३१ $\frac{18}{19}$	१००
क्षेत्र—ऐरावत	५२६ $\frac{6}{19}$		१४४७१ $\frac{5}{19}$	

(क)

वर्ण	पर्वत की नींव	कूट	ऊंचाई	चौड़ाई
सुवर्णमय	२५यो०	११	२५ यो०	मूल में २५, मध्य में १८$\frac{३}{४}$ अंत में १२$\frac{१}{२}$
रजतमय	५०	८	५० यो०	मू० में ५०, मध्य ३७$\frac{१}{२}$ अन्त २५
तप्तसुवर्ण	१००	९	१०० यो०	मू० १००, मध्य ७५, अन्त ५०
वैडूर्यमणि	१००	९	१००	मू० १००, मध्य ७५, अन्त ५०
रजतमय	५०	८	५०	मू० ५०, मध्य ३७$\frac{१}{२}$ अन्त ५२
हेममय	२५	११	२५	मू० २५, मध्य १८$\frac{३}{४}$ अन्त १२$\frac{१}{२}$

पर्वत और क्षेत्र

चार्ट (ख)

पर्वत और क्षेत्र	विस्तार (दक्षिण उत्तर)	(जघन्य) लम्बाई पूर्व पश्चिम	लम्बाई (उत्कृष्ट)	ऊँचाई
पर्वत—विजयार्ध	५०	९७४८$\frac{१२}{१९}$	१०७२०$\frac{११}{१९}$	२५
क्षेत्र—दक्षिण भरत	२३८$\frac{३}{१९}$	×	९७४८$\frac{१२}{१९}$	
क्षेत्र—उत्तर भरत	२३८$\frac{३}{१९}$	१०७२०$\frac{११}{१९}$	१४४७१$\frac{४}{१९}$	
ऐसे ही ऐरावत का विजयार्ध और दक्षिण उत्तर ऐरावत का प्रमाण है।				
पर्वत—विजयार्ध	५०	९७४८$\frac{१२}{१९}$	१०७२०$\frac{११}{१९}$	२५
क्षेत्र—दक्षिणऐरावत	२३८$\frac{३}{१९}$	१०७२०$\frac{११}{१९}$	१४४७१$\frac{५}{१९}$	
क्षेत्र—उत्तर ऐरावत	२३८$\frac{३}{१९}$	×	९७४८$\frac{१२}{१९}$	

संख्या	नाम	विस्तार		लम्बाई	ऊंचाई
१६	वक्षार पर्वत	५००	×	१६५१२$\frac{२}{१९}$	निष.नी.के पास ४०० नदी के पास ५००
३२	विदेह क्षेत्र	२२१२$\frac{७}{८}$	×	१६५१२$\frac{२}{१९}$	×
४	गजदन्त	४००	×	३०२०९$\frac{६}{१९}$	निष.नी.के पास ४०० सुमेरु, के पास ५००
३२	विदेह के विजयार्ध	५०	×	२२१२$\frac{२}{१९}$	२५
४	यमकगिरि	मूल में १००० मध्य में ७५० अन्त में ५०० यो० गोल हैं।	ये पर्वत गोल हैं।		२०००यो०
८	दिग्गज पर्वत	ये पर्वत गोल हैं।	मू. में १००, म.में ७५ अंत में ५०यो.		१००यो०
२००	कांचन गिरि	कांचन पर्वत गोल हैं।	मू. में विस्तार १०० म. में ७५अं. में ५०		१००यो०
४	नाभि गिरि	मू. १००० यो. म. ७५० अंत में ५०० गोल हैं।			१०००यो०
३४	वृषभ गिरि	मू. १००० यो. मध्य ७५ अं. में ५० गोल हैं			१००यो०

(ख)

वर्ण	पर्वत की नींव	कूट	ऊंचाई	चौड़ाई
चाँदी का	६ १/२	९	६ १/४	मू. ६ १/४ मध्य में ४ यो. १/४ १ कोस, अंत में ३ यो. १/२ कोस।
चाँदी	६ १/४	९	६ १/४	मू. में ६ १/४, मध्य ४ यो, १/४ १ कोस, अंत में ३ यो. १/२ कोस

वर्ण	नींव	कूट	ऊंचाई
सुवर्णमय	१०० सर्वत्र १२५ चतुर्थभाग	सभी पर ४-४	नि. नी. के पास १०० यो० सी० सी के १२५ यो.

	ऊंचाई			चौड़ाई
सौ. रजत, विद्यु. स्व. गंध.स्व.,माल्य वैडूर्य	१००सर्वत्र १२५चतुर्थ भाग	गंध.सौ.७ वि.मा.९	सु.केपास१२५ यो.निष.नी.के पास १००यो० म. में यथायोग्य	मू.में६ १/४ मध्य ४ यो. १/४ १कोस,अंत में ३यो. १/२कोस।
चाँदी के	६ १/८ योजन	सभी पर ९-९	६ १/४	
स्वर्णमय	२५ योजन			
श्वेत	२५ योजन			
विचित्र रत्नमय				

छब्बीस

चार्ट

नाम	कहाँ है ?	लंबाई	चौड़ाई	गहराई	मुख्य कमल	जल से ऊंचाई
पद्म	हिमवान पर	१०००	५००	१०	१ यो.	½ यो.
महापद्म	महाहिमवान	२०००	१०००	२०	२ यो.	१यो.
तिगिंच्छ	निषध पर	४०००	२०००	४०	४ यो.	२यो.
केसरी	नील ,,	४०००	२०००	४०	४ यो.	२यो.
पुण्डरीक	रुक्मि ,,	२०००	१०००	२०	२ यो.	१यो.
महापुण्डरीक	शिखरी,,	१०००	५००	१०	१ यो.	½ यो.

सीता के सरोवर	नदी के मध्य	लंबाई	चौड़ाई	गहराई	मुख्य कमल	जल से ऊँचा
	१०	१०००	५०० या नदी की चौ. प्रमाण	१०	१ को.	½
सीतोदा के सरोवर	१०	१०००	,,	१०	१ को.	½
सीता के मध्य	१०	१०००		१०	१ यो.	½
सीतोदा के मध्य	१०	१०००	५०० या नदी की चौ० प्रमाण	१०	१ यो.	½

इन सब सरोवरों के चारों तरफ वेदिका है और ½ योजन चौड़े वन खण्ड हैं।

सरोवर

(ख)

मुख्य पर निवास	परिवार कमल	परिवार देव आदि	मुख्य देवी का भवन	परिवार कमलों का विस्तारादि
श्री देवी	१४०११५ + १ मुख्य कमल	श्री देवी के इतने ही	१ को. लंबा, $\frac{3}{4}$ को. ऊंचा $\frac{1}{2}$ को. चौड़ा	मुख्य कमल से अर्ध हैं
ह्रीदेवी	१८०२३० + १	ह्री ,,	२ को. लंबा १$\frac{1}{2}$ को. ऊंचा १ को. चौड़ा	,,
धृति	५६०४७८ + १	धृति ,,	४ को. लंबा ३ को. ऊंचा २ को. चौड़ा	,,
कीर्ति	५६०४६० + १	कीर्ति ,,	४ को. लंबा ३ को. ऊंचा २ को. चौड़ा	,,
बुद्धि	२८०२३० + १	बुद्धि ,,	२ को. लंबा १$\frac{1}{2}$ को. ऊंचा १ को. चौड़ा	,,
लक्ष्मी	१४०११५ + १	लक्ष्मी,,	१ को. लंबा १$\frac{3}{4}$ यो. ऊंचा $\frac{1}{2}$ को. चौड़ा	,,

मुख्य पर निवास	परिवार कमल	परिवार देवादि
नाग कुमार देव या नागकुमारी	१४०११५	नाग कु. के उतने ही
,,	,,	,,
,,	,,	,,
,,	१४०११५	,,

इन सभी कमलों में जिन भवन हैं। ये सब कमल पृथ्वीकायिक हैं।

जंबूद्वीप की

नदियों के नाम	उद्गम स्थान,	उद्गम का प्रमाण	प्रवेश	गहराई उद्गम में	गहराई प्रवेश में	उद्गमतोरण
गंगा सिंधु	पद्म सरोवर से	६$\frac{१}{४}$	६२$\frac{१}{२}$	$\frac{१}{२}$ कोस	५ को.	९$\frac{३}{४}$
रोहित रोहितास्या	महापद्म से रोहित पद्म से रोहि.	१२$\frac{१}{२}$	१२५	१ कोस	१० को.	१८$\frac{६}{४}$
हरित् हरिकांता	तिगिंछ से हरित् महापद्म से हरिकांता	२५	२५०	२ कोस	२० को.	३७$\frac{४}{४}$
सीता सीतोदा	केसरी से सीता तिगिंछ से सीतोदा	५०	५००	४ कोस	४० को.	७६यो
नारी नरकांता	पुण्डरीक से-नारी केसरी से नरकांता	२५	२५०	२ कोस	२० को.	३७$\frac{४}{४}$
सुवर्ण रूप्यकूला	महापुंडरीक से सुवर्ण. पुण्डरीक से रूप्यकूला	१२$\frac{१}{२}$	१२५	१ कोस	१० को.	१८$\frac{६}{४}$
रक्ता रक्तोदा	महापुण्डरीक से रक्ता रक्तोदा	६$\frac{१}{४}$	६२$\frac{१}{२}$	$\frac{१}{२}$ कोस	५ को.	९$\frac{३}{४}$
विभंगा नदी १२ है	नील, निषध की तलहटी के कुण्ड	१२$\frac{१}{२}$	१२५	१ कोस	१० को.	१८$\frac{६}{४}$
गंगा सिंधु विदेह की	१६ नील की तलहटी के कुण्ड से	६$\frac{१}{४}$	६२$\frac{१}{२}$	$\frac{१}{२}$	५ को.	९$\frac{३}{४}$
रक्ता रक्तोदा १६ विदेह की	निषध की तलहटी के कुण्ड से	६$\frac{१}{४}$	६२$\frac{१}{२}$	$\frac{१}{२}$	५ को.	९$\frac{३}{४}$

इन सभी नदियों के दोनों तरफ वेदी और $\frac{१}{२}$ योजन के उपवन खंड हैं। जिनमें देवप्रसाद, वापिका, जल यंत्र आदि विद्यमान हैं।

नदियाँ चार्ट (क)

प्रवेशतोरण	परिवार नदियाँ	निकलने के कुण्ड	विजयार्ध गुफा में प्रवेश के समय	किस क्षेत्र में हैं	जलधारा की मोटाई
९३ ३/४	१४००० × २ = २८०००	६० यो.	८ योजन	भरत	२५यो
१८७ १/२	२८००० × २ = ५६०००	१२०	नाभिगिरि को १/२यो. छोड़कर मुड़ जाती	हैमवत	५०
३७५	५६००० × २ = ११२०००	२४०	नाभिगिरि को १/२ यो. छोड़कर	हरि	१००
५०	८४००० × २ = १६८०००	४८०	सुमेरु को अर्ध यो. छोड़कर सीतोदा विद्युत्प्रभ की गुफा में सीता माल्यवान की	विदेह	२००
३७५	५६००० × २ = ११२०००	२४०	नाभि. को १/२ यो० छोड़कर	रम्यक	१००
१८७ १/२	२८००० × २ = ५६०००	१२०	नाभिगिरि को १/२ योजन छोड़कर	हैरण्यवत	५०
९३ ३/४	१४००० × २ = २८०००	६०	विजयार्ध की गुफा से ८ योजन	ऐरावत	२५
१८७ १/२	२८००० × १२ = ३३६०००	+	विदेह में	पूर्व-पश्चिम विदेह में	
९३ ३/४	१४०० × २ = २८००० प्रत्येक की २८००० × १६ = ४४८०००	+	विदेह में विजयार्ध की गुफा से ८ यो०	कच्छा आदि १६ देशों में	
९३ ३/४	१४००० × २ = २८००० सभी की २८००० × १६ = ४४८०००	+	निदेह में विजयार्धं की गुफा से ८ यो०	मंगलाव. आ. १६ देशों में	

ये वेदिकायें अनेक तोरण द्वार जिन प्रतिमाओं से सुशोभित हैं ।

श्री जंबूद्वीप स्तुति

स्वयं भूत जिनगेह अकृत्रिम जंबूद्वीप मध्य शोभे।
बंदूं अट्ठत्तरि जिनमंदिर मनविशुद्धि हेतु मुद से ॥१॥

मेरु सुदर्शनगिरि को मस्तक नत हो करके प्रणमन कर।
उस पर स्थित षोडश जिनगृह सब गृह में प्रतिमा मनहर ॥२॥

उन सब जिनगृह, जिन प्रतिमा को त्रयशुद्धि में वंदूं मैं।
भक्तिभाव से नितप्रति प्रणमूं शिवसुखसिद्धि हेतु मैं ॥३॥

विदिशाओं में गजदंताचल चार कहे हैं सुन्दरतम।
उनमें त्रिभुवनपति जिनवर के मंदिर शोभें अति उत्तम ॥४॥

उन मन्दिर में आप्तप्रभु की प्रतिमायें शाश्वत शोभें।
नमोस्तु उन सबको नित मेरा स्वात्म-जन्य सुख मम होवे ॥५॥

षट् कुलपर्वत पर चैत्यालय रत्नमयी शोभें शाश्वत !
उन गृह में प्रतिमाएँ इक सौ आठ प्रमाण सभी में नित ॥६॥

अकृत्रिम जिनबिंब मनोहर उनको मृदु से नमूं सदा।
शिवसुख विभव प्राप्ति के हेतु षट् जिनमंदिर नमूं सदा ॥७॥

पूर्व और पश्चिम विदेह के शुभ वक्षारगिरी षोडश।
उन पर षोडश जिनमन्दिर हैं अकृत्रिम रत्नों के शुभ ॥८॥

उनमें राजित जिनवरप्रतिमा, को बंदूं त्रयकाल मुदा।
भवभय अग्नि शांत करने को शिरनत हो मैं नमूं सदा ॥९॥

पूर्वापर बत्तीस विदेह में बत्तीस रजताचल पर्वत।
उन पर बत्तीस जिनचैत्यालय अकृत्रिम शोभे संतत ॥१०॥

उनमें रजित जिनवरप्रतिमा, भक्तिभाव से बंदूं मैं।
भवसंताप नाश गम होवे त्रिकरण शुचि से अर्चूं मैं ॥११॥

भरतक्षेत्र अरु ऐरावत में दो विजयारध पर्वत हैं।
उन पर जिनमन्दिर दो राजें भावभक्ति से वंदूँ मैं ॥१२॥

उन मंदिर में जिनवरप्रतिमा, वंदन करूँ सदा शुचि से।
मन प्रसन्न के हेतु नमूं मैं भवदुःख नाश करूँ झट से ॥१३॥

जंबू शाल्मलि दो वृक्षों पर दो जिनचैत्यालय शाश्वत।
उनमें जिनवर की प्रतिमायें रत्नमयी शोभें नितप्रति ॥१४॥

भवदुःख अंतक जिनवर के प्रतिबिम्ब उन्हें मैं नमूं सदा।
भवदुःख शान्ति हेतु भक्ति से, सतत संस्तवन करूँ मुदा ॥१५॥

मेरु सुदर्शन के षोडश जिनगृह गजदंतगिरि के चार।
कुलगिरि के षट् कहे विदेहक्षेत्र के षोडशगिरि वक्षार ॥१६॥

रजताचल के चौंतीस जिनगृह जंबूशाल्मलि के दो जान।
ये सब अट्ठत्तर चैत्यालय उनको नमूँ सदा सुखदान ॥१७॥

मुनिगणवंदित पादसरोरुह सुरपति नाग नरेन्द्र नुतं।
त्रिभुवन जिनगृह शाश्वत जितने मनःशुद्धि हेतु प्रणमन ॥१८॥

मंगलद्रव्य विविध तोरण घटधूप कुम्भमंगल शोभें।
मणिमाला से अनुपम जिनगृह मनःशुद्धिकृत प्रणमूँ मैं ॥१९॥

घातकि-पुष्करार्ध द्वीपों में इष्वाकारगिरि ऊपर।
मनुजोत्तरनग पर निजगृह हैं नंदीश्वरवर द्वीप रुचिर ॥२०॥

रुचकगिरी कुण्डल पर्वत पर जितने जिनमन्दिर राजें।
उन मंदिर के जिन बिम्बों को वंदू पाप तिमिर भाजै ॥२१॥

त्रिभुवन में जो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषगृह स्वर्गों में।
श्रीजिनवरगृह शोभित होते उसमें प्रतिमा अगणित हैं ॥२२॥

ये सब त्रिभुवनपूज्य जिनालय साधुगणों से वंदित हैं।
वंदूँ सबको सदा मुझे वे, जिनगुणसम्पति देवें ॥२३॥

नमोस्तु जिनप्रतिमा को मेरा सकल ताप विच्छेद करो।
नमोस्तु जिनप्रतिमा को मेरा सकल दोष से शुद्ध करो ॥२४॥

नमोस्तु जिनप्रतिमा को मेरा सकल सौख्य संसिद्धि करो ।
हे जिनदेव ! पवित्र करो मम भव से रक्षा झटिति करो ॥२५॥

नमोस्तु अकृत्रिम जिनमंदिर, तीनलोक संपत्भर्ता ।
नमोस्तु परमात्मन् ! परमेष्ठिन् ! सकललोक चूड़ामणिनाथ ॥२६॥

नमोस्तु जिनप्रतिमा को मेरा सकल क्लेश विच्छेद करो ।
रागमोहयुत मम अज्ञानवान् मन झटिति पवित्र करो ॥२७॥

जंबूद्वीपजिनालय संस्तुति भक्ति से मैं करूँ मुदा ।
अर्हंत **ज्ञानवती** श्री मुझको होवे झटिति कर्मभिदा ॥२८॥

●

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के प्रकाशन

प्रकाशन	मूल्य
१. अष्ट सहस्री (प्रथम भाग हिन्दी सहित)	५१-००
२. जैन ज्योतिर्लोक	२-००
३. तिलोक भास्कर	१२-००
४. सामायिक	२-५०
५. न्यायसार	७-००
६. भगवान महावीर कैसे [illegible]ने	२-००
[illegible]	[illegible]
[illegible] महा[illegible] धर्मतीर्थ	-५०
९. श्री वीर जन स्तुति	-२५
१०. ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर	१-५०
११. द्रव्य संग्रह (पद्यानुवाद सहित)	१-००
१२. आत्मा की खोज	-७५
१३. जम्बूद्वीप	३-००
१४. बाल विकास भाग १	१-००
१५. बाल विकास भाग २	१-५०
१६. बाल विकास भाग ३	२-००
१७. बाल विकास भाग ४	२-५०
१८. समाधिशतक इष्टोपदेश	१-००
१९. आर्यिका	२-००
२०. आर्यिकारत्न श्री ज्ञानमती जीवन दर्शन	१-५०
२१. व्रतविधि एवं पूजा	१-००
२२. इन्द्रध्वजविधान	१५-००
२३. प्रतिज्ञा	२-५०
२४. प्रवचन निर्देशिका	५-००
२५. चौबीस तीर्थंकर	२-५०
२६. आराधना	२-५०
२७. शिक्षण पद्धति	१-००
२८. पंचपरमेष्ठी विधान	३-००
२९. तीस चौबीसी विधान	८-००
३०. भगवान बाहुबलि	१-००
३१. रत्नकरण्ड पद्यावली	२-५०
२३. मातृ भक्ति	१-५०
३३. प्रभावना	२-५०
३४. ऋषि मण्डल पूजा विधान	२-५०
३५. शांतिनाथ पूजा विधान	२-५०
[illegible]६. नित्यपूजा	[illegible]-५०
[illegible] [illegible]दर्शन मेरु पूजा	[illegible]
[illegible] [illegible]कांकी	-५०
३९. तीर्थंकरत्रय पूजा	१-००
४०. भगवान ऋषभदेव	२-५०
४१. रोहिणी नाटक	२-५०
४२. संस्कार	२-५०
४३. जीवनदान	१-५०
४४. उपकार	२-५०
४५. परीक्षा	३-००
४६. नियमसार (पद्यावली)	५-००
४७. दिगम्बर मुनि	१-००
४८. जैन भारती	१५-००
४९. अभिषेक एवं पूजन	१-००
५०. बाहुबली पूजा	०-२५
५१. बाहुबली नाटक	२-००
५२. योग चक्रेश्वर बाहुबली	२-००
५३. कामदेव बाहुबली (अनेक भाषाओं मे)	१-००
५४. बाहुबली पूजा एवं स्तोत्र	१-५०
५५. जम्बूद्वीप गाइड	०-५०
५६. जैन बाल भारती भाग १	२-००
५७. जैन बाल भारती भाग २	२-०९
५८. जैन बाल भारती भाग ३	२-५०
५९. नारी आलोक भाग १	३-००
६०. नारी आलोक भाग २	३-५०
६१. दशधर्म	५-००